विवेक शिखा के आजीवन सदस्य

१५५. श्री विजय कुमार मल्लिक—मुजफ्फरपुर
१५६. श्रीमती गिरिजा देवी—बखरिया (बिहार)
१५७, श्री अशोक कौशिक-मालवीय नगर, (नई दिल्ली)
१५८. रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ—देवघर (बिहार)
१५६. श्री रामकृष्ण साधना कुटीर, खण्डवा (म० प्र०)
१६०, श्रीमती आभा रानाडे, अहमदाबाद (म० प्र०)
१६१. श्री डी० एन० थानवी, जोधपुर (राजस्थान)
१६२. श्री सोहन लाल यादव, नाहर कटिया (आ०)
१६३ डा० (श्रीमती) रेखा अग्रवाल, शाहजहाँपुर (उ प्र.)
१६४. डॉ० (श्रीमती) सुनीला मल्लिक—नई दिल्ली
१६५. श्रीरामकृष्ण संस्कृतिपीठ, कामठी (नागपुर)
१६६. कुमारी जसबीर कौर आहूजा, पटियाला, पंजाब
१६७. श्रीमती मंजुला बोर्दिया, उदयपुर (राजस्थान)
१६८, श्रीमती सुदेश, अम्बाला शहर (हरयाणा)
१६६. डॉ० अजय खन्ना (बरेली उ० प्र०)
१७०. श्री एस० टी पुराणिक—नागपुर
१७१. श्री धन्नालाल अमृतलाल सोलंकी, कलवानी
१७२. डॉ० कमलाकांत, वड़ोदा (गुजरात)
१७३. डॉ० विनया पेण्डसे, उदयपुर (राजस्थान)
१७४. सन्तोष वोनी, रामवन (जम्मू एवं कश्मीर)
१७५. श्री राजौभाई वी० पटेल, सूरत (गुजरात)
१७६. श्री प्रकाश देवपुरा—उदयपुर (राजस्थान)
१७७. श्री एस० के० मुन्दरा, जामनगर (गुजरात)
१७८. डॉ० मोहन बन्सल, आनन्द (गुजरात)
१७६. अडकिया कन्सलटेन्ट्स, प्रालि० मुम्बई
१८०. सुश्री एस० पी० त्रिवेदी—रोजकोट (गुजरात)
१८१. अद्वैत आश्रम, मायावती—(उ० प्र०)
१८२. श्री शत्रुघ्न शर्मा, फतेहाबाद—(बिहार)
१ ३. रामकृष्ण मिशन, शिलांग—(मेघालय)
१८४. श्री त्रिभुवन महतो, राँची—(बिहार)
१८५. रामकृष्ण मिशन आश्रम, राँची—(बिहार)
१ ६. श्री आर० के० चोपड़ा, इलाहाबाद—(उ० प्र०)
१८७. श्री श्यामनन्दन सिंह, राँची (बिहार)
१८८. श्री डी० आर० साहू, रायपुर—(म० प्र०)
१८६. रामकृष्ण मिशन स्कूल, नरोत्तमनगर (अरुणाचल प्र०
१६०. रामकृष्ण मिशन हॉस्पिटल, इटानगर (अरु० प्र०)
१६१. रामकृष्ण मिशन स्कूल, अलाँग (अरु० प्र०)
१६२. श्री घनश्याम चन्द्राकर, औंधी (म० प्र०)
१६३. श्री भास्कर मढ़रिया, भिलाई (म० प्र०)
१६४. स्वामी विरजानन्द, रा.कृ.मि.नरोत्तमनगर (अ.प्र.)
१६५. श्री हरवंश लाल पहडा, जम्मूतवी (कश्मीर)
१६६. श्री योगेश कुमार जिन्दल, विवेक बिहार (दिल्ली)

इस अंक में

पृष्ठ

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत
उठो जागो और लक्ष्य प्राप्त किये बिना विश्राम मत लो।

विवेक शिखा

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द-भावधारा की एकमात्र हिन्दी मासिकी

वर्ष —१६ सितम्बर—१९९७ अंक—९

इष्टदेव का हृदय-कमल में रूप अनूप दिखा। निजानन्द में रखती अविचल विमल 'विवेक शिखा'॥

सम्पादक :
डा० केदारनाथ लाभ

सहायक सम्पादक :
शिशिर कुमार मल्लिक

सम्पादकीय कार्यालय :
विवेक शिखा
रामकृष्ण निलयम्
जयप्रकाश नगर
छपरा—८४१३०१
(बिहार)
फोन : ०६१५२-२२६३९

सहयोग राशि :

आजीवन सदस्य—	५०० रु०
वार्षिक—	४० रु०
रजिस्टर्ड डाक से—	५५ रु०
एक प्रति—	४ रु०

रचनाएँ एवं सहयोग-राशि संपादकीय कार्यालय के पते पर ही भेजने की कृपा करें।

श्रीरामकृष्ण ने कहा है

(१)

भगवान् से प्रार्थना करो,—'हे प्रभु, अपने करुणापूर्ण मुख से मेरी रक्षा करो। मुझे असत् से सत् की ओर, तम से ज्योति की ओर, मृत्यु से अमृतत्व को ओर ले चलो।

हे माँ, मेरे भीतर से ये विचार नष्ट कर दे कि मैं उच्च जाति का हूँ, मैं ब्राह्मण हूँ और वे लोग नीच जाति के हैं, शूद्र हैं, क्योंकि वे सब विभिन्न रूपों में तेरे अतिरिक्त और हैं क्या ?

हे माँ जगदम्बा, मैं लोकमान्यता नहीं चाहता, देहसुख नहीं चाहता, मेरा मन गंगा-यमुना के प्रवाह की तरह तुझमें मिलकर एक हो जाय। माँ, मैं भक्तिहीन हूँ, योगसाधना नहीं जानता, मैं दीनहीन हूँ, बन्धुहीन हूँ, मैं किसी से प्रशंसा नहीं चाहता, कृपा करके मेरे मन को अपने चरण कमलों में सदा निमग्न रख।'

(२)

जब तुम निर्जन में साधना करो तब परिवार से बिल्कुल दूर रहो। उस समय अपनी पत्नी, लड़के, लड़की, माता, पिता, बहिन, भाई, इष्ट मित्र, अथवा रिश्तेदारों को भी पास मत आने दो। निर्जन में साधना करते हुए विचार करो, 'संसार में मेरा कोई नहीं है। भगवान् ही मेरे सर्वस्व हैं।' ज्ञान और भक्ति के लिए रोते हुए भगवान् से प्रार्थना करो।

यदि तुम कहो कि इस प्रकार परिवार से दूर एकान्त में कितने दिन रहना चाहिए, तो मैं कहूँगा कि इस प्रकार एक दिन भी यदि तुम रह सको तो भी अच्छा है। लगातार तीन दिन रह सको तो और भी अच्छा है।

वन्दना

—डॉ० केदार नाथ लाभ

मेरे मन-मानस-मन्दिर में, प्रभु रामकृष्ण विश्राम करो !

तुम ही मेरी पूजा-अर्चा
कीर्तन वन्दन चिन्तन चर्चा

निज पद-रज से मम जीवन को, प्रभु नव वृन्दावन धाम करो !
मेरे मन-मानस-मन्दिर में, प्रभु रामकृष्ण विश्राम करो !!

नयनों में रूप तुम्हारा हो
उर में तव रस की धारा हो

अधरों पर नाम तुम्हारा हो, प्रभु ऐसा आठो याम करो !
मेरे मन-मानस-मन्दिर में, प्रभु रामकृष्ण विश्राम करो !!

तुमने गिरीश को था तारा
हो गया रसिक भंगी न्यारा

सँवरी विनोदनी नटी नाथ, मुझ पर करुणा अविराम करो !
मेरे मन-मानस-मन्दिर में, प्रभु रामकृष्ण विश्राम करो !!

मम काम क्रोध मद मोह हरो
अब और न अधिक मुझे बिसरो

कर्मों के कोलाहल पर धर, अंकुश प्रभु पूर्ण विराम करो !
मेरे मन-मानस-मन्दिर में, प्रभु रामकृष्ण विश्राम करो !!

●

कम्युनिस्ट देशों में रामकृष्ण-विवेकानन्द-अनुशीलन

—स्वामी विमलात्मानन्द
बेलुड़ मठ

[स्वामी विमलात्मानन्द रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन के वरिष्ठ साधु हैं। ये सम्प्रति बेलुड़ मठ में कार्यरत हैं। इनका प्रस्तुत लेख बंगला पत्रिका 'तपोवन' के फाल्गुन १४०३ अंक में प्रकाशित हुआ था। इसका हिन्दी अनुवाद साभार डॉ० केदारनाथ लाभ ने किया है।—सं०]

"कालान्तर में जो विराट अभ्युदय होगा, जिसके फलस्वरूप किसी नये अध्याय की शुरुआत होगी, उसका आगमन रूस या चीन से होगा। मैं ठीक से नहीं देख पा रहा हूँ कि इन दो देशों में से कहाँ से होगा 'रूस अथवा चीन से'—यह उक्ति किसी कम्युनिस्ट नेता या किसी राजनेता की नहीं है। यह उक्ति है स्वामी विवेकानन्द की। अपनी पाश्चात्य शिष्य भारत-अनुरागिनी और भगिनी निवेदिता की सहयोगिनी भगिनी क्रिस्टीन से यह बात स्वामीजी ने कही थी। स्वामीजी ने यह भविष्यवाणी आज से प्रायः एक सौ वर्ष पहले की थी। स्वामीजी के भाव नेत्रों में इस विराट अभ्युदय का स्रोत उतर आया था। यद्यपि उन दिनों रूस में जार का शासन और ईसाई पुरोहितों का दुर्दम प्रताप था, चीन राजा के अधीन था तथा आज के अन्यान्य कम्युनिस्ट देशों में भी राजतन्त्र शक्तिशाली था। किन्तु निपुण ऐतिहासिक सामाजिक विश्लेषण और गहन आध्यात्मिक ज्योति के आलोक में स्वामीजी ने रूस-चीन के उत्थान की विशाल सम्भावना देखी थी। एक बार स्वामीजी रूस भी जाना चाहते थे। किन्तु जाना संभव नहीं हुआ। ऐसा कि १८९६ ई० में लन्दन में स्वामीजी के एक अँग्रेज शिष्य का संस्मरण है : "स्वामीजी ने रूस के सम्बन्ध में कई बातें कही थीं। उन्होंने उस दिन कहा था कि वे आशा करते हैं कि रूस संसार का नेतृत्व करेगा।" कैसी असीम दूरदृष्टि थी उनकी? रूस में कम्युनिस्ट नेतृत्व को १८१७ ई० में सामर्थ्य प्राप्त हुई। और चीन में १९४९ ई० में। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यूरोप के साथ अन्यान्य महादेशों के मानचित्र में भारी हेर फेर हुआ। क्यूबा, पूर्वी जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया-युगोस्लाविया रूमानिया, पोलैण्ड, अलबेनिया, बुलगेरिया और हंगरी—इन सभी देशों में कम्युनिस्ट शासन की प्रतिष्ठा हुई। नेतृत्व रहा रूस के हाथों में। एक मात्र अपवाद था मार्शल टीटो का युगोस्लाविया। कम्युनिस्ट शासन के अंगों के उपकरणों में धर्मचिन्तन का निषेध कर दिया गया, व्यक्ति की स्वाधीनता को भाँड़ में बन्द कर दिया गया, चर्च को बन्द कर दिया गया। लौह शासन के कठोर आवरण में कम्युनिस्ट देश संसार के अन्य देशों के सामने रहस्यमय हो गया। किन्तु स्वामी विवेकानन्द ने अपनी भविष्यवाणी के साथ ही पश्चिमी, खासकर यूरोप के देशों को सावधान करते हुए कहा था कि तुम लोग यदि आध्यात्मिकता के मार्ग का अवलम्बन नहीं करोगे, तो तुम सब विनाश के कगार पर खड़े हो जाओगे। नियति का यह निष्ठुर परिहास है कि स्वामी जी की प्रथम दूरदृष्टि की भाँति

सावधान होने के कथन की सत्यता को आज संसार देख रहा है। एक के बाद एक कम्युनिस्ट देश यूरोप के के ताश घर की भाँति भहराकर गिर रहे हैं। वे एक ऐसी वस्तु को गले लगाना चाहते हैं जो उनलोगों को नैतिकता तथा मनुष्य के हृदय की शान्ति की भूख को दिखायेगी। उन्होंने धर्म के द्वार खोल दिये हैं। चर्चों के प्राङ्गण में सरगर्मी आ गयी है। इसी बीच कम्युनिस्ट देशों के नेता रूस में सरकारी भाव के रूप में रामकृष्ण-विवेकानन्द भावधाराने प्रवेशकर लिया है, चीन में भी विवेकानन्द पर विवेचना होने लगी है। अन्यान्य देशों में भी शुरू हो गया है रामकृष्ण-विवेकानन्द पर विचार-विमर्श। जिन कम्युनिस्ट देशों में अब तक शुरू नहीं हुआ है, वहाँ भी संभवतः यह भावधारा प्रवेश करेगी। किन्तु दुर्दान्त कम्युनिस्ट शासन में भी इन सब देशों में रामकृष्ण-विवेकानन्द पर चर्चा हुई है। रामकृष्ण मिशन के संन्यासियों के सम्मुख इन देशों के लोगों ने वक्तृता दी है। विभिन्न सूत्रों से रामकृष्ण-विवेकानन्द सम्बन्धी पुस्तकें भी वहाँ के लोगों ने पढ़ी हैं। फिर किसी-किसी बुद्धिजीवी ने स्वयं ही इन सब पुस्तकों का संग्रह भी किया है। समानभाव वाले मित्रों के साथ नियमित रूप से साप्ताहिक या मासिक विवेचना-चक्र भी शुरू किया है। आज रूस में निर्बाध रूप से धर्म-चर्चा होती है। धार्मिक-स्वतन्त्रता का कानून रूस की सुप्रीम संस्था (संसद) में पारित हो चुका है। यहाँ प्रसंगवश यह उल्लेख योग्य है कि कम्युनिस्ट देशों के प्रमुख-प्रमुख विश्वविद्यालयों में भारतीय संस्कृति-धर्म विभाग पहले भी थे और अब भी हैं। भारतीय धर्मशास्त्र रामायण, महाभारत, गीता, उपनिषद् आदि इस देश की भाषाओं में अनूदित हुए हैं। इस विषय में रूस अग्रदूत और अग्रगण्य है। रूस में रामकृष्ण-विवेकानन्द पर अनुशीलन लियो टॉलस्टाय के समय में ही शुरू हुआ। टॉलस्टाय स्वामी विवेकानन्द के समकालीन थे। वे स्वामी जी का 'राजयोग' पढ़कर प्रभावित हुए थे। श्रीरामकृष्ण के उपदेश (Sayings of Sri Ramakrishna Paramhansa) का पाठकर टॉलस्टाय अभिभूत हो गये थे। उन्होंने चुन-चुनकर श्रीरामकृष्ण के एक सौ उपदेश लिखे थे। वह पुस्तक अब तक अप्रकाशित थी, अब इन दिनों रूसी भाषा में वह प्रकाशित हुई है, यह स्मरण रखने योग्य है कि कम्युनिस्ट जमाने में रूस के अन्यान्य बुद्धिजीवियों को बर्फीले घरों में भेजे जाने पर भी टॉलस्टॉय आज भी अपनी महिमा में देदीप्यमान हैं, टॉलस्टाय ने विवेकानन्द साहित्य के तीन खण्डों का संग्रह कर उन्हें पढ़ा था।

रूस में 'The Gospel of Sri Ramakrishna' का अनुवाद १९१४ ई० में हुआ था। तत्कालीन रूस सरकार के प्रतिरक्षा विभाग के उच्च शिक्षित कर्मचारी जैकव पोपव ने १९०६-१९१८ ई० के बीच स्वामी विवेकानन्द के राजयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग और कर्मयोग का रूसी भाषा में अनुवाद किया था। किन्तु कम्युनिस्ट शासन में इन अनुवादों का अस्तित्व समाप्त हो गया। कर्मयोग के कुछ अंशों को साइक्लोस्टाइल कर बुद्धिजीवीगण अपने बीच आदान-प्रदान किया करते थे। वर्तमान काल में The Gospel of Sri Ramakrishna' का अनुवाद और प्रकाशन हुआ है। इसी बीच स्वामी विवेकानन्द की चुनी हुई रचनाओं के दो खण्डों का रूसी भाषा में प्रकाशन हुआ है। धीरे-धीरे स्वामीजी की समस्त रचनाओं का अनुवाद प्रकाशित होगा। इसका दायित्व लिया है १९८८ ई० में स्थापित 'मास्को विवेकानन्द सोसाइटी' ने। आजकल यह श्रीरामकृष्ण मठ, बेलुड़ मठ का शाखा केन्द्र हो गया है और इसका नाम हो गया है—'रामकृष्ण सोसाइटी वेदान्त सेन्टर।

फिर आश्चर्य की बात यह है कि कम्युनिस्ट जमाने के फ्रांसीसी मनीषी रोमाँ रोलाँ द्वारा रचित श्रीरामकृष्ण की जीवनी की ५३०० प्रतियाँ रूसी भाषा में प्रकाशित हुई थी। बाजार में उसके आते ही सारी प्रतियाँ बिक गयीं। बहुत दिनों के बाद हाल में इस रूसी अनुवाद की दो लाख प्रतियाँ विवेकानन्द सोसाइटी द्वारा रूस में छपी हैं। इसके साथ ही रोमाँ-रोलाँ कृत 'विवेकानन्द की जीवनी' भी प्रकाशित हुई है। १९३६ ई० में श्रीरामकृष्ण जन्म-शताब्दी के अवसर पर गठित सामान्य समिति में विश्व के अन्यान्य ज्ञानी गुणी-जनों में रूस के दो व्यक्ति सदस्य थे—प्रोफेसर टी० स्टेचारवर्स्की और डॉ ए० वोस्तिकोव। १९६३ ई० में स्वामी विवेकानन्द की जन्म शताब्दी समारोह का मास्को और लेनिनग्राद में भी आयोजन हुआ था। इंस्टिट्युट ऑव एशिया तथा इंस्टिट्युट ऑव फिलॉसफी के युवकों के प्रयास से मास्को के हाउस ऑव फ्रेण्डशिप हॉल में आयोजित स्वामी जी की जन्म-शताब्दी सभा की अध्यक्षता की थी रूस के श्रेष्ठ दार्शनिक श्री फिडोसिएव ने। विशिष्ट व्यक्तियों में उपस्थित थे भारतीय विषयों के तत्वविद् श्री ई० पी० चेलिशोव, श्री कोमारोव, श्री लिटमैन, श्री इयानिकेभ। विवेचित विषय थे—'सामाजिक उन्नति के क्षेत्र में संग्रामी मानवतावादी विवेकानन्द', 'स्वामीजी के दार्शनिक सिद्धांत' 'विवेकानन्द और भारतीय साहित्य' और 'स्वामी जी की प्रदीप्त आशीर्वाणी'। सोवियत भारतीय सांस्कृतिक सोसाइटी और लेनिनग्राद विश्वविद्यालय ने स्वामी जी के जन्म शताब्दी-समारोह का उद्घाटन १९६३ ई० की १० मई को किया। विश्वविद्यालय के छात्रों ने संस्कृत में मंगलाचरण, विवेकानन्द-स्तोत्र और कविता पाठ किया। समारोह में इन प्रबन्धों का पाठ हुआ—'भारत की महान सन्तान स्वामी विवेकानन्द, विवेकानन्द का मानवतावाद, भारत की अन्त-र्राष्ट्रीयता, स्वामी विवेकानन्द की कार्यधारा।

रामकृष्ण मिशन के ब्रह्मलीन स्वामी दयानन्द जी (कलकत्ता स्थित रामकृष्ण मिशन सेवा प्रतिष्ठान के शिशु-मंगल के प्रतिष्ठाता और रामकृष्ण मठ के ट्रस्टी) रूस गये थे पहलीबार १९३२ ई० में। धर्म प्रचारक के रूप में नहीं, शिशु और प्रसूतिसदन के क्रियाकलापों का पर्यवेक्षण करने के क्रम में वे अमेरिका से भारत लौटते समय रास्ते में रूस गये थे। १९६१ ई० के अगस्त महीने में श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्दजी महाराज (अंग्रेजी भाषा के विख्यात सुलेखक और प्रख्यात सुवक्ता तथा संप्रति रामकृष्ण संघ के परम उपाध्यक्ष) मास्को गये थे। फिर लम्बे सोलह वर्षों के अन्तराल के बाद (१९७७ ई०) उन्होंने मास्को विश्वविद्यालय में 'विवेकानन्द और उनका मानवतावाद' विषय पर अपना प्रसिद्ध व्याख्यान दिया। रामकृष्ण मिशन इंस्टिट्युट ऑफ कल्चर, गोलपार्क, कलकत्ता के सचिव, स्वामी लोकेश्वरानन्द जी महाराज, सन् १९८४ ई० से प्रायः प्रत्येक वर्ष ही रूस जाते हैं। इसके तीन वर्षों के बाद (सन् १९८७ ई०) मास्को में आयोजित एक अन्तर्राष्ट्रीय विवेचन चक्र में रामकृष्ण मिशन के तत्कालीन महासचिव स्वामी हिरण्मयानन्द जी और सहायक सचिव स्वामी गीतानन्द जी ने योगदान किया था।

स्वामी लोकेश्वरानन्द जी की वार्षिक यात्रा के फलस्वरूप रूस के सर्वाधिक प्रभावशाली राइटर्स-युनियन और अकादमी ऑव सायन्स के साथ रामकृष्ण मिशन घनिष्ठता बढ़ती गयी। इसी बीच गोर्वाचोव के ग्लासनोस्त और पेरेस्ट्रोइका का प्रवर्तन हुआ। रूस के अनेक बुद्धिजीवियों ने श्रीरामकृष्ण की सार्ध शताब्दी, शान्ति, विज्ञान और विवेकानन्द आदि के विवेचन-चक्र में भाग

लिया। उन लोगों ने बेलुड़मठ, जयराम बाटी, कामारपुकुर, नरेन्द्रपुर आदि स्थानों को उत्कंठा पूर्वक घुम-घुम कर देखा है। गोलपार्क स्थित मिशन का केन्द्र उन लोगों का अस्थायी निवास-स्थल था। यहाँ तक कि बेलुड़ मठ में सुबह का नाश्ता और दोपहर का भोजन भी उन लोगों ने किया है। और भी अवाक् होने की बात यह है कि किसी-किसी वैज्ञानिक, साहित्यिक, शिल्पी, छात्र आदि ने बेलुड़ मठ में पूज्यपाद प्रेसिडेन्ट महाराज से मन्त्र दीक्षा भी ली है।

रूस में रामकृष्ण-विवेकानन्द अनुशीलन के अग्रदूत हुए श्री ई० पी० चेलिशोव। वे प्रख्यात भारत तत्वविद्, नेहरू पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता, साहित्यिक, विवेकानन्द पुरस्कार से विभूषित (१९९० : रामकृष्ण मिशन इस्टिट्युट ऑव कल्चर द्वारा प्रदत्त), इतिहास के प्राध्यापक, हिन्दीभाषी और ओरियेन्टल स्टडीज के संचालक हैं। इन्होंने अनेक अनुसन्धान कर्त्ताओं को उत्प्रेरित किया है। रामकृष्ण-विवेकानन्द अनुशीलन में इन्होंने महत्तम योगदान किया है। श्री चेलिशोव ने एक नातिदीर्घ निबन्ध लिखा था—'स्वामी विवेकानन्द सेन्टेनरी मेमोरियल वॉल्युम' में। (डॉ० रमेश चन्द्र मजूमदार इसके सम्पादक थे।) निबन्ध का नाम है—'Swami Vivekananda—Indian Humanist, Democrat and Patriot'. श्री चेलिशेव की पुत्र-वधू इतिहास की अध्यापिका ईलिना चेलिशेव कहती हैं, "हमारे देश में विवेकानन्द के जीवन, दर्शन और सन्देश के विषय में विचार-विमर्श १९६५ ई० से ही शुरू हुआ था। उसके ०-३० वर्ष पूर्व से ही स्वामी विवेकानन्द के कर्मजीवन और उपदेशों के नैतिक और मानवीय भावाकर्षण ने विश्व के अन्यान्य देशों की भाँति सोवियत रूस के जनगण का मर्म-स्पर्श किया था।" यह उल्लेख योग्य है कि रूस में स्वामी जी की जन्म-शताब्दी का आयोजन इससे भी दो वर्ष पहले हुआ था।

स्वामी लोकेश्वरानन्द जी की उपस्थिति में, १९८८ ई० के ७ जून को मास्को में विवेकानन्द सोसाइटी की स्थापना हुई। श्री चेलिशव ही सोसाइटी के प्रेसिडेन्ट हुए। दस विशिष्ट सोवियत बुद्धिजीवी, इसके सदस्य हुए। सम्प्रति सामान्य सदस्यों की संख्या चार सौ है। संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। यह सोसाइटी एक त्रैमासिक पत्रिका प्रकाशित करती है। पत्रिका का नाम है 'भेस्तनिक'। इसके सम्पादक है मास्को इस-टिट्युट ऑव इन्टरनेशनल रिलेशन के बगलाभाषा और साहित्य के प्राध्यापक ए० दानिलचुक। (ये रवीन्द्र गवेषक हैं तथा बगला भाषा में लिख सकते एवं व्याख्यान दे सकते हैं। सम्प्रति "सोवियत रूस और स्वामी विवेकानन्द' विषय पर अनुसन्धान कर रहे हैं।) स्वामीजी की रचनाओं के प्रकाशन की बात तो पहले ही कही जा चुकी है।

इस शताब्दी के तीसरे दशक में सोवियत रूस में श्री निकोलस रोरिक प्रसिद्ध चित्रकार और दार्शनिक थे। वे भारत-प्रेमी थे। इसके साथ ही रामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित थे। उन्होंने एक अपूर्व निवन्ध लिखा था। "In all parts of the world the name of Ramakrishna is venerated. Also is revered Swami Vivekananda, who symbolies true discipleship. The names of Ramakrishna-Vivekananda and the glorious host of their followers remain on the most remarkable pages of the history of the spiritual culture of India. (संसार के सभी भागों में रामकृष्ण का नाम समादृत है। इसी प्रकार स्वामी विवेकानन्द भी, जो वास्तविक शिष्यत्व के प्रतीक हैं, श्रद्धेय हैं। श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द और उनके यशस्वी अनुगामियों के नाम भारत के आध्यात्मिक-सांस्कृतिक इतिहास के परम विशिष्ट पृष्ठों में अंकित हैं।)—यह उक्ति

रोरिक के निबन्ध का एक अंश मात्र है) उन्होंने श्रीरामकृष्ण का एक विलक्षण चित्र बनाया था। चित्र के नीचे उन्होंने लिखा था—(चित्र बेलुड़ मठ में रखा हुआ है। प्रोफेसर शंकरी प्रसाद बसु ने भी अपनी 'विवेकानन्द ओ समकालीन भारतवर्ष' नामक पुस्तक में यह चित्र छापा है) वर्तमान समय में श्री ई० अलेकजेण्डर ने श्रीरामकृष्ण विवेकानन्द के अनेक चित्र बनाये हैं। १६८६ ई० में इन चित्रों की एक प्रदर्शनी कलकत्ते के गोलपार्क में लगायी गयी थी।

रूस के प्रोफेसर लिटमैन (ये वैज्ञानिक हैं) और डॉ० किसटिचारकोभ—इन दोनों व्यक्तियों ने रामकृष्ण-विवेकानन्द के सम्बन्ध में बहुत सारी पुस्तकें लिखी हैं। रूस के अनुसन्धानकर्त्ताओं और विख्यात प्रकाशकों ने छापी हैं: (१) 'Indian Philosophy In Modern Times' by V. Brodov (दो अध्यायों में रामकृष्ण-विवेकानन्द का विवेचन ८। मास्को में यह पुस्तक रूसी और अँग्रेजी भाषा में छपी है।) (२) 'Ethical Values of Balgangadhar Tilak, Aurovinda Ghosh and Swami Vivekananda by Elina Chelishov (मास्को से रूसी और अँग्रेजी भाषा में प्रकाशित) (३) Vivekananda Studies in Soviet Union) ग्यारह विद्वानों के लेख इसमें संकलित हैं। रूसी भाषा में छपी इस पुस्तक का अनुवाद रामकृष्ण मिशन इंस्टिट्युट ऑव कल्चर ने प्रकाशित किया है। ( ) Tolstoy on Ramakrishna by S. Sa.ebriani (५) Tolstoy and Vivekananda By S. P. Gnatuk-Danilchuk (४ और ५ नं० की पुस्तकें अँग्रजी भाषा में हैं। प्रकाशक: इंस्टिट्युट ऑव कल्चर) (६) विवेकानन्द—वि०सि० कोजटिसेनको (रूसी भाषा में)। इनके अतिरिक्त डॉ० आर० वि० रिवाकोभ (अकादमी ऑव सायन्स के इंस्टिट्युट ऑव ओरियेन्टल स्टडिज के रिसर्च स्कॉलर) ने श्री माँ सारदादेवी की जीवनी रूसी भाषा में लिखी थी। रूस में रामकृष्ण-विवेकानन्द की प्रयोजनीयता की बात का उल्लेख कर डॉ० रिवाकोव कहते है—"दक्षिणेश्वर के मन्दिर के अपढ़ पुजारी के विषय में चिन्तन-मनन करना आज भी अत्यन्त प्रासंगिक और प्रभावशाली है। श्रीरामकृष्ण ने प्रत्यक्ष रूप से राजनीति की बात नहीं कहीं, किन्तु उनके उपदेश ने समस्त सत्यों के ऐक्य साधन पर जोर दिया है। फलस्वरूप आज के संसार में जो साम्प्रदायिकता फैल गयी है उसके विरुद्ध श्रीरामकृष्ण के उपदेश एक बड़े अस्त्र का काम करते हैं।" सम्प्रति बंगला भाषा में लिखित रामकृष्ण कथामृत का रूसी भाषा में पूरा अनुवाद हो रहा है। सोवियत राइटर्स युनियन के भारतीय डेस्क की लेखिका मीरा सालगानिक कहती हैं, "मैं एक नास्तिक समाज में रहती हूँ। हमलोगों के मत और आदर्श में ईश्वर का कोई स्थान नहीं है। स्वभावत: धर्म को स्वीकार कर लेना हमलोगों के लिए कठिन है। किन्तु धर्म को उसके प्रथागत रूप में नहीं देखकर हमलोग यदि उसके नीतिबोध को ग्रहण करना सीखें तो मुझे प्रतीत होता है कि हमलोगों के लिए श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द को स्वीकार कर लेने में कोई असुविधा नहीं होगी।"

अब चीन के प्रसंग में आता हूँ। स्वामीजी ने १८६३ ई० में पश्चिमी देशों की यात्रा के समय चीन के कैण्टन, संघाई आदि कई स्थानों का दर्शन किया था। अपने मद्रासी शिष्य आलासिंगा पेरुमल को लिखित पत्र में चीन के इन सभी स्थानों का वर्णन उन्होंने किया था तथा चीन की संस्कृति की प्रशंसा की थी। १६३६ ई० में आयोजित श्रीरामकृष्ण जन्म शताब्दी को सामान्य समिति के सदस्य थे चीन के चार विद्वान। इस उपलक्ष्य में कलकत्ता में आयोजित विश्वधर्म

महासम्मेलन में चीन के कॉन्स्युलिट जेनरल (महावाणिज्य दूत) डॉ० सी० एल० चुन ने भाषण दिया था। चीन के चेयरमैन माउत्से तुङ्ग के दुर्दान्त शासन में भी बीजिंग विश्वविद्यालय में इन्स्टिटयुट ऑव साउथ एशियन स्टडीज (दक्षिणी एशियाई अध्ययन-संस्थान) था। इस संस्थान और चीन के अकादमी ऑफ सोशल सायन्स के महत्त्वपूर्ण व्यक्ति इतिहास के प्राध्यापक हुवाङ्ग जिन चुआङ्ग ने यथेष्ट रूप से रामकृष्ण-विवकानन्द का विवेचन किया था और अब भी करते हैं। चीनी भाषा में लिखित उनकी एक पुस्तक का नाम है—'The Modern Indian Philosopher Vivekananda: A Study' पुस्तक के परिशिष्ट में एक स्वतन्त्र अध्याय में श्रीरामकृष्ण के जीवन, दर्शन आदि समाज चिन्तन की विवेचना हुई है। पश्चिम बंगाल के वर्तमान सहकारिता और खाद्य मंत्री श्री निर्मल बसु को चीन की ओर से यह पुस्तक उन्होंने उपहार में दी थी। अवाक् होकर विस्मयपूर्ण रूप से श्री बसु ने पूछा था: "आप लोग स्वामी विवेकानन्क को किस दृष्टि से देखते हैं?" उत्तर में प्रोफेसर चुआङ्ग ने कहा था, स्वामी विवेकानन्द को हमलोग केवल एक धार्मिक नेता के रूप में नहीं देखते। हमलोगों के विचार में स्वामीजी आधुनिक भारत के एक महान समाज सुधारक थे। वे भारत के समाजवाद के प्रथम प्रवक्ता थे। भारतीय क्रान्तिकारियों के लिए वे अम्लान प्रेरणा के स्रोत थे।' प्रोफेसर चुआङ्ग ने कलकत्ता की एशियाटिक सोसाइटी में १९८४ ई० में व्याख्यान दिया था। विषय था—'स्वामी विवेकानन्द और चीन।'

यूरोप के पोलैंड में भी रामकृष्ण-विवेकानन्द का सर्वाधिक अनुशीलन हुआ है। कम्युनिस्ट शासन के पहले ही रामकृष्ण मिशन के संन्यासी स्वामी यतीश्वरानन्द जी (विगत अन्यतम सह-संघाध्यक्ष) १९३४ ई० में दो महीने पोलैण्ड में थे। उनके व्याख्यान पोलिश भाषा में अनूदित हुए थे। मूलतः स्वामी यतीश्वरानन्द जी के सत्प्रयास से ही वारशा में श्रीरामकृष्ण की जन्म-शताब्दी मनायी गयी थी। १९३६ ई० में कलकत्ता में आयोजित श्रीरामकृष्ण जन्म-शताब्दी के अवसर पर विश्वधर्म सम्मेलन में भी अपना व्याख्यान वारशा विश्वविद्यालय के डॉ० श्री स्कोयाय ने लिखकर भेजा था। त्रुको विश्वविद्यालय की प्राध्यापिका हेलेन डि० विलमैन ग्रावोस्का ने उस सम्मेलन में भाषण भी दिया था। कम्युनिस्ट पोलैण्ड में स्वामी रंगनाथानन्द जी १९६१ ई० के जून महीने में गये थे। वहाँ उन्होंने इंस्टिट्युट ऑव इन्टरनैशनल अफग्रर्स में व्याख्यान दिया था। वहाँ के इण्डोपोलिश फ्रेण्डशिप सोसाइटी के श्री मारदिस्की ने रामकृष्ण विवेकानन्द के संबंध में विवेचना की थी। हाल में (८४ ई०) गुद इस्क विश्वविद्यालय की प्राध्यापिका मारिया सर्वागास्कर ने पोलिश भाषा में श्री रामकृष्ण की जीवनी प्रकाशित की है। और भी विस्तृत जीवनी लिखने के लिए कलकत्ते में अनुसन्धान कर गयी हैं। The Gospel of Sri Ramakrishna (श्रीरामकृष्ण वचनामृत) के कुछ अंशों का पोलिश भाषा में अनुवाद किया है—क्रैस्टिविना सिजनेस्को ने। इसका जेरोक्स (छाया प्रति) कर श्री वाण्डा वायनोवास्को ने अपने मित्रों में वितरण किया है।

१९६१ ई० के जून महीने में स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज राष्ट्रीय अतिथि के रूप में पाँच दिन चेकोस्लोवाकिया में थे। वहाँ उन्होंने स्लोवाक एकेडमी ऑव सायन्स में वक्तृता दी थी। चार्ल्स विश्वविद्यालय के रेक्टर (अध्यक्ष) डॉ० मिवोसका-लेब ने रामकृष्ण-विवेकानन्द की पुस्तकें पढ़ी हैं। स्वामी रंगनाथानन्द जी के अनुरोध पर १९६३ ई० में प्राग में विवेकानन्द की जन्मशताब्दी आयोजित की गयी थी। चेकोस्लोवास्किया की

पीस कमिटी (शान्ति समिति) और सांस्कृतिक-वैज्ञानिक संस्थाओं के सम्मिलित प्रयास से विवेकानन्द की जन्म शताब्दी आयोजित हुई थी। इसमें इन्स्टिट्यूट ऑव इस्टर्न स्टडीज के डिरेक्टर (निदेशक) जेरोस्लाव प्रसेव ने भाग लिया था। प्राग में काफी लोग नियमित रूप से रामकृष्ण विवेकानन्द की पुस्तकें पढ़ते हैं। इनमें इंजीनियर श्री जीरी वासेक अपने घर पर मित्रों के साथ सप्ताहिक अनुशीलन-चक्र १९६१ ई० से चलाते आ रहे हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि चेक शिल्पी फ्रैंक डोरा ने स्वप्न में श्री रामकृष्ण का दर्शन किया था। उन्होंने अपने स्वप्न में दृष्ट श्री रामकृष्ण की आकृति का चित्रण किया था जो इन दिनों बहुत ही प्रचलित है। वे श्री रामकृष्ण के पार्षद स्वामी अभेदानन्द के शिष्य थे। फ्रैंक डोरा ने स्वामी विवेकानन्द, और स्वामी अभेदानन्द के भी चित्र बनाये थे। उनके द्वारा अंकित श्री माँ सारदा का चित्र भी प्रसिद्ध है। उन्होंने स्वामी विवेकानन्द के गेरुआ वस्त्र का एक टुकड़ा स्वामी जी की शिष्या मिस जोसफिन मैक्लाउड से प्राप्त किया था। वे क्रान्ति के पूर्व के व्यक्ति थे। कम्युनिस्ट शासन में फ्रैंक डोरा की बहन मिस हेलेन डोरा और श्रीमती मारिया रिजाकोवा रामकृष्ण-विवेकानन्द का स्मरण कर बच गयी थी। रामकृष्ण-विवेकानन्द की आठ पुस्तकें छपी थीं। उसके साथ ही रोमारोलाँ की रामकृष्ण और विवेकानन्द की जीवनी सम्प्रति अप्रकाशित है।

स्वामी रंगनाथानन्द जी ने युगोस्लाव, क्युबा और पूर्वी जर्मनी में व्याख्यान दिये थे। स्वामी लोकेश्वरानन्द जी बुलगारिया के सोफिया में कई बार गये थे। जर्मनी भाषा में श्री रामकृष्ण वचनामृत और विभिन्न योगों पर स्वामी विवेकानन्द की पुस्तकें उपलब्ध हैं। ये सब पश्चिमी जर्मनी से प्रकाशित हैं। अब पश्चिम और पूर्वी जर्मनी के मिल जाने के फलस्वरूप अवश्य ही इन सब पुस्तकों का प्रचार पूरी जर्मनी में हो जाएगा। बच गये हंगरी, रूमानिया और अलबानिया। पता नहीं, इन देशों में रामकृष्ण-विवेकानन्द का अनुशीलन होता है या नहीं। फिर भी रामकृष्ण जन्मशताब्दी के अवसर पर गठित विश्वधर्म महासम्मेलन समिति को रूमानिया युगोस्लाविया, पोलैण्ड, चीन, रूस और चेकोस्लोवाकिया से विशिष्ट व्यक्तियों ने अभिनन्दन एवं शुभकामनाओं के सन्देश भेजे थे।

रूस या अन्य कम्युनिस्ट देशों से प्रकाशित रामकृष्ण-विवेकानन्द विषयक पुस्तकों में लेखकों के मन्तव्य और विचार सम्भवतः रामकृष्ण मिशन के मत से किसी-किसी विषय में मेल नहीं खाते। तथापि, यह बात निस्सन्देह है कि उन लोगों ने अपने मतानुसार श्री रामकृष्ण को समझा है और विवेकानन्द को जाना है। उसी भाव से उन लोगों ने अपने मतामत व्यक्त किये हैं। तथापि एक चित्र अत्यन्त स्पष्ट रूप से दिवालोक की भाँति हमलोगों को दिखाई पड़ रहा है कि कम्युनिस्ट देशों ने रामकृष्ण विवेकानन्द अनुशीलन को दूर नहीं रखा। बल्कि इस अनुशीलन ने इन सब देशों के लोगों के मन में एक स्पन्दन पैदा किया है, सचेतनता भरी है। और इसे ही इन लोगों ने पाथेय के रूप में ग्रहण किया है। रामकृष्ण-विवेकानन्द में सार वस्तु है, इसे इन लोगों ने निश्छल भाव से स्वीकारा है हमलोगों के देश के अनेक बुद्धिजीवियों, सिद्धांतवादी नेताओं इतिहासविदों, समाज शास्त्रियों की भाँति उन्होंने रामकृष्ण विवेकानन्द को उड़ा नहीं दिया। रामकृष्ण विवेकानन्द को धर्म जगत का व्यक्ति कहकर अपांक्तेय नहीं माना। इस ओर मैं सबका ध्यान आकृष्ट करता हूँ। किन्तु, इसका दायित्व रामकृष्ण विवेकानन्द नाम से जुड़े प्रतिष्ठानों और सेवा संस्थाओं के कार्यकर्ताओं पर जाता है।

जब श्रीरामकृष्णदेव ने दर्शन दिये

अनुवादिका : श्रीमती चेतना वर्मा
7 बजरंगबाड़ी 'सत्यम्'
जामनगर रोड, राजकोट-360003

[श्रीमती विमला ठकार (विमलाताई) को श्रीरामकृष्णदेव ने आबू में दर्शन दिये थे, उस घटना का रोचक वर्णन प्रस्तुत है—सं॰]

उस दिन वैशाख की पूनम थी। दीदी (विमला ताई) को नौकाविहार का बेहद शौक था। वह उस रात नौकाविहार करने गयी थी। दस बजे घर आयी और निंद्राधीन हो गई। दीदी मीठी नींद में ही थी, कि उनके बगीचे की पूरब दिशा का बंद दरवाजा एकाएक खुल गया। भगवान् श्रीरामकृष्ण भीतर आए। दीवार के नजदीक किताबों की छोटी-छोटी आलमारियाँ थीं। उसके ऊपर भगवान् बुद्ध की तसवीर रखी थी (इस समय भी मौजूद है), उसके पास बहुत सारे पुष्प रखे थे, जहाँ दीदी ने अगरबत्ती जलायी थी। वे उनके पास आए। अपनी कोहनी उस पर टिका ली। धोती का एक छोर गले को चौतरफा लिपटा हुआ था। सहसा दीदी बिस्तर और मच्छरदानी का त्याग करके बाहर निकली। आम मानव शरीर की तरह ही उनका शरीर था। दीदी ने उनके चरणों में नतमस्तक हो प्रणाम किया। उन्होंने मस्तक पर हाथ रखा। बंगाली परन्तु कुछ देहाती भाषा का प्रयोग वे कर रहे थे। अति प्रसन्न होकर उन्होंने कहा : "बीजमंत्र का प्रयोग कभी मत करना वह तुम्हारे लिए अनावश्यक है।" ठाकुरजी ने कहा : "तुम्हारे लिए ना कोई व्रत की आवश्यकता है और ना कोई मंत्रजप की, जो चल रहा है, वही उचित है।" चार-पाँच वाक्योच्चार के पश्चात् दीदी को आभास हुआ कि यह देह भस्मविलीन हो गयी थी! यहाँ कैसे आयी? जैसे ही मन में उद्वेग हुआ, वैसे ही अचानक मस्तक पर से करस्पर्श हट गया, देखा तो कोई नहीं। उस वक्त तीन बजकर तीस मिनट हुए थे। दीदी को संशय हुआ कि इतना जीवित स्पर्श आशंका नही हो सकती। मृतदेह का, जो अचेतन है, उसका पुनः जीवित होना असंभव है। फिर यह क्या हो सकता है? उन्होंने स्वय मन में निश्चय कर लिया कि "जब मुझे कोई जवाकुसुम का फूल और संदेशरूप में मिठाई देगा तभी मैं सत्य को स्वीकार करूँगी।" ठाकुरजी जवाकुसुम के फूल एवं संदेश का प्रसाद माँ के चरणों में अर्पित कर रहे थे। दीदी ने मन में ठान लिया कि जब तक यह आशंका दूर नहीं हो जाती तब तक वह अन्न-जल नहीं लेगी। पाँच बजकर तीस मिनट पर इन्दु बहन ने कमरे में झाँका। पार्वती बहन को जाकर बोली कि दीदी ध्यानस्थ बैठी है। दोनों वहाँ आईं और बोलीं : "दीदी!", दीदी ने कहा "क्या है?" दोनों ने कहा "छः बज गए है, आज चाय-पानी कुछ लोगी नहीं?" दीदी ने कहा : "देखिए आज मैं निष्कार्य ही रहूँगी जब तक मैं यहाँ से उठू नहीं, तब तक चाय-पानी निषेध है, और न ही कोई मुझे बुलाना।" दोनों ने पूछा : "क्या आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं है?" दीदी ने कहा : "नहीं, कुछ कारण है, वह मैं शाम को कहूँगी।" सुबह के साढ़े तीन बजे से वह बैठी हुई थी। नित्यानुसार शाम को मौसाजी आये। पार्वती बहन ने सुबह से दीदी की हालत का बयान कह सुनाया। मौसाजी ने कहा : "होगा, कोई कारण।" मौसाजी के साथ अभी वार्तालाप हो ही रहा था, इतने में रक्तवर्ण के समान भगवा वस्त्र धारण किये हुए एक संन्यासी

ऊपर आये और पूछा : "क्या विमला देवी यहाँ रहती हैं ?" दीदी ने आवाज सुनी और शीघ्र ही बाहर निकली। शिवकुटी की आधी सीढ़ियाँ वे चढ़ गये थे। दीदी दौड़कर नीचे आ गयी। "आइए महात्मा, ऊपर आइए।" वे ऊपर आए और स्थान ग्रहण किया। दीदी मूक बनकर खड़ी रही। महात्मा ने झोली में से जवाकुसुम का पुष्प निकाला और दीदी के हाथ में दिया, इसके बाद खाकी रंग के कागज का एक छोटा-सा लिफाफा निकाला, जिसके अन्दर ताजे संदेश रखे हुए थे, जिसका घी खाकी लिफाफे पर लगा हुआ था, वह रखा और कहा ठाकुरजी ने कहलवाया है कि आपको बुरा दिखाने का काम वह क्यूँ करे ? "आपकी जानकारी में नहीं था कि माँ जाति का व्रत रखना उनको पसन्द नहीं था ?" दीदी ने कहा : "यह मेरी जानकारी में है।" इसके पश्चात् आपने व्रत क्यूँ किया ? दीदी ने पूछा : "आप कब आए ? कहाँ ठहरे हैं ?" कहा : "कल शाम को आया और लालमंदिर में ठहरा हूँ।" आज सुबह में ठाकुरजी का हुक्म मिला है। दीदी ने कहा : "ऐसा संदेश आबू में तो नहीं बनता है।" महात्मा ने कहा : "कहाँ बनता है, इससे आपको क्या मतलब ?" दीदी ने उनको सादर प्रणाम किया और वे एकाएक नीचे उतर गये। दीदी की आँखों में आँसू भर आये। हाथ में जवाकुसुम का फूल और संदेश वाला लिफाफा लिया। मौसाजी को लेकर दीदी स्वामीजी जयानन्दजी के यहाँ गयीं। मौसाजी को हैरानी हुई कि पूरे दिन निर्जल रहने के पीछे अवश्य कोई कारण हो सकता है ? संन्यासी के साथ क्या बात हुई ? श्री जयानंदजी के निकट जाकर उन्होंने जवाकुसुम का फूल तथा संदेश का लिफाफा उनके हाथों में दिया। थोड़ी देर बैठी। श्री स्वामीजी ने कहा : "ठाकुरजी का भी इम्तहान ले रही हो क्या ?" दीदी ने कहा : "नहीं-नहीं, ठाकुरजी का इम्तहान असम्भव है।" मुझे यह जानना था कि कहीं यह मिथ्याज्ञान तो नहीं है ? प्रथम संदेश निकालकर उसके तीन हिस्से किये। एक हिस्सा त्रिकमभाई को दिया, एक हिस्सा दीदी को दिया और एक हिस्सा अपने मुख में रखा और बोले : "जाइए, अब यह सब में वितरण कर दीजिए।"

(गुजराती पुस्तक "विमल संस्मरण" में से साभार गृहीत)

तुम्हारे देश को वीरों की आवश्यकता है; अतः वीर बनो। पर्वत की भाँति अडिग रहो। 'सत्यमेव जयते' - सत्य की ही सदैव विजय होती है। भारत चाहता है एक नयी विद्युत् शक्ति, जो राष्ट्र की नस-नस में नया जीवन संचार कर दे। साहसी बनो, साहसी बनो; मनुष्य तो एक बार ही मरता है। मेरे शिष्य कायर न हों। मुझे कायरता से घृणा है। गम्भीर से गम्भीर कठिनाइयों में भी अपना मानसिक सन्तुलन बनाये रखो; क्षुद्र अबोध जीव तुम्हारे विरुद्ध क्या कहते हैं, इसकी तनिक भी परवाह न करो। उपेक्षा ! उपेक्षा ! उपेक्षा ! ध्यान रखो, आँखें दो हैं, कान भी दो हैं, पर मुँह केवल एक है। पर्वतकाय विघ्न-बाधाओं में से होते हुए ही सारे महान् कार्य सम्पन्न होते हैं। अपना पुरुषार्थ प्रकट करो। काम और कांचन में जकड़े हुए मोहान्ध व्यक्ति उपेक्षा की ही दृष्टि से देखे जाने योग्य हैं।

—स्वामी विवेकानन्द

स्वामी ब्रह्मानन्द जी के संस्मरण (२)

—स्वामी विजयानन्द

[प्रस्तुत संस्मरण रामकृष्ण वेदान्त सेंटर लन्दन द्वारा प्रकाशित द्विमासिक पत्रिका 'वेदान्त' (VEDANT) के अंक २६८ (मार्च-अप्रैल, १९९३) तथा अंक ७० (जुलाई-अगस्त, १९९६) में अंग्रेजी में प्रकाशित हुआ था। इसके हिन्दी अनुवाद की यह दूसरी किस्त है। अनुवादक हैं, रामकृष्ण मठ, मद्रास से प्रकाशित अंग्रेजी मासिक पत्रिका 'वेदान्त केसरी' के सम्पादक एवं रामकृष्ण मिशन के वरिष्ठ साधु —स्वामी ब्रह्मेशानन्द। —सं०]

मैं और मेरे गुरुदेव

हिन्दुओं के अनुसार गुरु-शिष्य का सम्बन्ध शाश्वत है। इसीलिए एक हिन्दू, गुरु को अपना चिर संगी समझता है। गुरु-शिष्य का सम्बन्ध परस्पर प्रेम और आदर भाव पर आधारित है। शिष्य गुरु को अपना आध्यात्मिक पथ प्रदर्शक ही नहीं, अपना सुहृत् पिता और आदर्श का प्रतिरूप भी मानता है और गुरु, शिष्य को अपना पुत्र, मित्र तथा आध्यात्मिक उत्तराधिकारी मानता है। मानवों के प्रारब्धानुसार उनके मन का गठन भिन्न-भिन्न होता है, और इसीलिये उनकी आध्यात्मिक-जीवन सम्बन्धी धारणा भी भिन्न-भिन्न होती है। मानसिक और नैतिक मान्यताओं पर व्यक्तित्व निर्भर करता है और व्यक्तित्व के अनुसार ही व्यक्ति निर्णय करता है। व्यक्तित्व की विविधता के कारण ही परम प्रेमास्पद चैतन्य धन परमात्मा की प्राप्ति के असंख्य पथ हैं। यही कारण है कि शिष्य गुरु से अपनी मनःस्थिति एवं संस्कारों के अनुरूप एक विशिष्ट निर्देश प्राप्त करता है। प्रत्येक हिन्दू का एक इष्टदेव होता है जिसका निर्णय या तो वह स्वयं करता है अथवा गुरु के परामर्श द्वारा किया जाता है।

उस समय मेरा कोई इष्ट नहीं था क्योंकि मेरी मंत्र दीक्षा नहीं हुई थी। मेरी ईश्वर विषयक धारणा केवल बौद्धिक थी। मैंने दूसरों की मान्यताओं, पुस्तकों के पठन और विज्ञ समझे जाने वाले वरिष्ठ व्यक्तियों के मतानुसार ईश्वर के सम्बन्ध में एक विशुद्ध बौद्धिक धारणा बना ली थी। मेरी धार्मिक निष्ठाएं भी छिछली थीं। इनके पीछे कोई दृढ़ता अथवा साक्षात् अनुभूति का साक्ष्य अथवा भावना की अक्षुण्णता और निश्चय नहीं था।

स्वामी ब्रह्मानन्द जी के बेलुड़ मठ आने के पूर्व मैं श्रीरामकृष्ण के एक अन्य अंतरंग पार्षद स्वामी शिवानंद जी के निर्देशानुसार इस प्रकार से प्रार्थना किया करता था; हे प्रभु ! कुछ लोग कहते हैं कि आप हैं, दूसरे कहते हैं कि आपकी कोई सत्ता नहीं है। कुछ आपको साकार तो कुछ निराकार बताते हैं। कृपा कर मेरे हृदय में प्रकट होकर उसे अपनी सत्ता से आलोकित करें।" तर्क संगत प्रतीत होने वाले इस अंश की आवृत्ति, उपयुक्त चिन्तन और किसी-न-किसी प्रकार की अनुभूति की उत्कंठा के फलस्वरूप मैं लाभान्वित हो रहा था और भगवत्सान्निध्य का कुछ अनुभव करने लगा था। लेकिन फिर भी मेरा मन, संशय के कारण इतना नहीं जितना अनुभव के अस्थायित्व के कारण, दोलायमान बना रहता था। मुझे ऐसा लगता था कि मेरी सारी आध्यात्मिक भावनाएं मन की कल्पनाएं हैं और यह बात मुझे जरा भी अच्छी नहीं लगती थी। मेरे भीतर विद्यमान रसायनशास्त्र का अतीत विद्यार्थी ऐसा असंदिग्ध प्रमाण चाहता था जिसे प्रदर्शित किया जा सके। उस समय मैं सोचता था कि ईश्वर एक वस्तु है जिसका यह

कर्त्तव्य है कि वह अपने अस्तित्व का प्रमाण देकर यह सिद्ध करे कि वह मिथ्या भ्रम अथवा भूत-प्रेत जैसी कोई वस्तु नहीं है। मुझे यह नहीं पता था कि ईश्वर अपरिवर्तनशील नित्यसाक्षी या द्रष्टा हैं जो परम प्रेमास्पद एवं परम सत्य है। इसके विपरीत मैं अनित्य, परिवर्तनशील, क्षरणशील जीव तथा देह, मन, बुद्धि और अहंकार का ऐसा संघात मात्र हूँ जिसके घने आच्छादन ने मेरे परम प्रेमास्पद, सर्वस्व, परमसत्ता, परमात्मा और इष्ट को आवरित कर रखा है। अपने मन की तत्कालीन स्थिति तथा मेरे गुरु की कृपा की स्पष्ट धारणा देने के लिये मैं उस समय के कुछ अनुभवों का वर्णन करता हूँ।

मैं प्रयोगों की अवस्था से गुजर रहा था। जैसा मैं कह चुका हूँ, मैं ईश्वर या लोगों द्वारा अवतार माने जाने वाले श्रीरामकृष्ण से उनके अस्तित्व का कोई ठोस प्रमाण चाहता था। मैंने बहुत से साधुओं से सुना था कि स्वामी विवेकानन्द का कथन है कि श्रीरामकृष्ण अभी भी सच्चे भक्तों के समक्ष सशरीर प्रकट होते हैं। मुझे इस बात का विश्वास नहीं होता था। मैं सोचता था कि विनयी, सरल, सहृदय और बहुत अच्छे होते हुए भी ये संन्यासी अपनी कल्पनाओं के शिकार हैं। यह कैसे सम्भव है कि जिन श्रीरामकृष्ण का अस्थि-कलश मैंने अपनी आँखों से देखा है वे मानव शरीर धारण कर प्रकट होंगे ? लेकिन मेरा तर्क इन साधुओं के कथन का खंडन करने में समर्थ नहीं था। एक दिन स्वामी ब्रह्मानंदजी के कमरे में जाने के बदले मैं मन्दिर में चला गया। वहां दूसरों के साथ बैठे-बैठे मैं तीव्रता से सोचने लगा, "यदि श्रीरामकृष्ण के दर्शन के बारे में साधुओं की बात सत्य हो तो मुझे श्रीकृष्ण के नूपुरों की ध्वनि सुनाई दे।" आश्चर्य है कि मुझे तत्काल नूपुर-ध्वनि सुनाई दी। लज्जित हो मैं तत्काल वहाँ से चला गया। लेकिन अगले ही क्षण मैं तर्क करने लगा और इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अपने तीव्र आत्म सुझाव के कारण मैंने वह ध्वनि सुनी थी। अत: मेरे दो दिन संशय और ऊहापोह में बीते। तीसरे दिन मैं श्रीरामकृष्ण से उनकी जीवंत सत्ता का कोई ऐसा स्थूल प्रमाण माँगने के विचार से मंदिर में गया जिसे दूसरे भी देख सकें। मैंने सोचा, "यदि भोर के इस समय एक मछुआरिन आकर 'विशेष प्रकार की एक मछली' का नाम लेकर पुकारे तो मैं तुम्हारे अस्तित्व में विश्वास करूँगा।" मेरे इस प्रकार प्रार्थना करते ही हम लोगों ने मछुआरिन की पुकार सुनी। भंडारी महाराज नाराज हो गये और उस बेचारी बुढ़िया को डाँटने हेतु नीचे चले गये क्योंकि उसने इस शांत प्रात: वेला में लोगों के ध्यान में व्यवधान पैदा किया था। मैं अत्यंत लज्जित हुआ और रो पड़ा और जब मैं बड़ी मुश्किल से नीचे उतर रहा था तो मैंने स्वामी ब्रह्मानंद जी को सीढ़ियों के नीचे खड़ा पाया। उनके चेहरे पर असंतोष झलक रहा था। ज्योंही मैं उन्हें प्रणाम करने के लिये झुका, उन्होंने मुझे बुरी तरह डाँटते हुये कहा, "बहुत प्रयोग हो गये, समझे ? ऐसा अब कभी नहीं करना, कभी भी नहीं।" रुआँसा होते हुए मैं बोला, "मैं अब कभी भी ऐसा नहीं करूँगा।" इस प्रकार ईश्वर के बाह्य प्रमाण प्राप्ति सम्बन्धी मेरे प्रयत्नों का अंत हो गया। फिर भी मैं परमात्मा के अंतर्यामित्व, अवतार के कपाल-मोचकत्व या सर्वकर्म बंधनमोचकत्व तथा परम-करुणामयत्व के बारे में कुछ भी नहीं समझ सका। मेरे लिये इन्द्रियगोचर जगत् ही सत्य बना रहा, जो कुछ मात्रा में मनोमय भी है तथा जो प्रत्यक्ष गोचर है।

हम सभी की अपनी सीमित व कट्टर मान्यताएँ है, नैतिकता की संकीर्ण धारणाएँ हैं और अपने ज्ञान का अहंकार है। लेकिन इनके कारण उच्चतर अपरोक्ष ज्ञान के समस्त द्वार बंद हो जाते हैं तथा

इनसे हमारी बहुत हानि होती है, यह बात बहुत कम लोग समझ पाते हैं। मुझ में ये सारे दोष विद्यमान थे। विशेषकर मैं अपनी नैतिक मान्यताओं को बहुत महत्व देता था। गुरु की कृपा से किस प्रकार उनमें से एक मान्यता निर्मूल हुई, अब मैं उसका वर्णन करता हूँ।

एक दिन अपराह्न के समय, जिस स्थान पर बेलुड़मठ में अब माँ सारदा का मन्दिर है, वहाँ एक पेड़ के सामने मैंने कलकत्ता रंगमंच की सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री तारा को खड़े देखा। मैं उसके अभिनय कौशल का प्रशंसक था। वह जिस किसी भूमिका में अभिनय करती, वह एकदम सजीव हो उठता था और दर्शक सदा उसकी प्रशंसा करते थे। उस समय वह कार्य निवृत्त हो चुकी थी तथा विरले ही नाट्यमंच पर दिखाई देती थी। उसे बेलुड़-मठ में देखकर मुझे कुछ आश्चर्य हुआ क्योंकि मेरी कुछ पूर्व-निर्धारित किन्तु निराधार मान्यताएं थीं। उसका प्रशंसक होते हुए भी मेरे भीतर का आदर्शवादी उसका व्यक्तिगत रूप से वैसा स्वागत नहीं कर सका जैसा किसी अन्य महिला का करता। लेकिन भगवत्कृपा रहस्यमय और दुर्बोध्य-रूप से कार्य कर रही थी। अभिनेत्री ने मुझे नमस्कार किया और पूछा कि क्या वह महाराज के दर्शन पा सकती है? वह साधारण वेशभूषा में थी, फिर भी मेरी आँखों के सामने से कलाकार ओझल हो गई और एक पतिता स्त्री दिखाई देने लगी। अपनी भावनाओं को गोपन रखते हुए मैंने कहा, 'महाराज से अभी मुलाकात नहीं हो सकती क्योंकि वे विश्राम कर रहे हैं।" यह कह कर मैं वहाँ से जाने लगा। लेकिन उसने महानता सुलभ माधुर्य के साथ पुनः कहा, "कृपया देखिये न, कहीं महाराज बाहर न आ गये हों, और कृपया पूछ लीजिये कि मैं उनके दर्शन कर सकती हूँ क्या?" अनिच्छापूर्वक मैं महाराज के कमरे की ओर गया। महाराज के कमरे के सामने वाले बरामदे में पहुँचने पर मैंने महाराज को मानो किसी की प्रतीक्षा करते खड़े देखा। उन्होंने मुझसे पूछा, "क्या बात है बेटा?" मैंने उन्हें कहा कि अभिनेत्री उनसे मिलना चाहती है। महाराज ने कहा, "शीघ्र जाओ और उसे बुला लाओ।" सीढ़ियाँ उतरते-उतरते मैं सोचता रहा, "क्या आश्चर्य है कि महाराज इस स्त्री से मिलना चाहते हैं।" लेकिन मैंने अपने विचार अपने तक ही रखे और उसे साथ लेकर प्रतीक्षा कर रहे महाराज के पास पहुँचा। अभिनेत्री ने महाराज के चरणों में साष्टांग प्रणाम् किया। महाराज ने कहा, "आओ माँ, बैठो।" उसके बाद उन्होंने मुझे कहा, "अच्छी चाय और टोस्ट बनाओ तथा कुछ प्रसादी मिठाई और फल ले आओ।" और भी अधिक आश्चर्य-चकित हो मैं यह सब लाने चला गया। चाय और नाश्ते की ट्रे लेकर लौटने पर मैंने जो दृश्य देखा, वह सदा के लिये मेरे मन पर अंकित हो गया है। अभिनेत्री तारा महाराज के चरणों पर सिर रखे, उन्हें अपने नयनजल से आप्लावित करती हुई साष्टांग पड़ी थी। महाराज अपने राजसी ढंग से खड़े थे और वह कह रही थी, "बाबा (पिताजी), आप मेरे जीवन के बारे में सब कुछ जानते हैं, आपसे कुछ भी गोपन नहीं है। बताइए, क्या मेरी मुक्ति की कोई आशा है?" महाराज ने कहा, "मुझे तुमने पिता कहा है; तो आज से संसार में मेरी पुत्री, स्वामी ब्रह्मानन्द की कन्या के रूप में रहो। अब उठो बेटी, तुम भूखी होगी। कुछ खाओ और यह चाय पिओ। आशा है, यह अच्छी बनी है।" अभिनेत्री ने महाराज के पवित्र चरणों को अपने लंबे केशों से पोंछा और मुस्कुराते हुये मेरे हाथों से ट्रे ले ली। एक अव्यक्त भावना से मेरा शरीर सिहर उठा और नेत्रों में आनंदाश्रु उमड़ पड़े। बाद में हमारे महान् गुरुदेव की महासमाधि के उपरांत, उनके मन्दिर के उद्घाटन के दिन उस महान् अभिनेत्री तारा से मेरी पुनः भेंट

हुई। लेकिन उसमें सम्पूर्ण परिवर्तन घटित हो गया था। उसने मुझ से कहा, "भाई, आज हमें अपने पिता को अपने हृदय में देखना होगा न।" अपने उमड़ते आसुओं को रोकते हुए मैंने कहा, "हाँ।"

महाराज और तारा की उस भेंट से मैंने बहुत-सी बातें सीखी और बहुत कुछ अनुभव किया। उस अपराह्न मेरे भीतर के आदर्शवादी को एक जोरदार और परिवर्तनकारी आघात लगा। महाराज की कृपा से मैं आज जान पाया हूँ कि सभी अशुभ कर्म उस नित्य शुद्ध आत्मा को आवरित भर करते हैं। वे उसे नष्ट नहीं कर सकते। और एक कृपा दृष्टि' एक करुणामय वाक्य, भगवान् के चरणों में आंतरिक और पूर्ण समर्पण करने वालों के हृदय को पूर्णरूपेण पवित्र कर सकता है।

मेरे अहंकार पर दूसरा प्रहार सीधा हुआ था। मठ में आने के पूर्व मुझमें एक रासायनिक-क्षमता का अद्भुत-विकास हुआ था। मैं किसी भी अज्ञात तरल पदार्थ को सूँघ कर ही उसमें विद्यमान रासायनिक पदार्थों को निश्चयपूर्वक बता सकता था। एक दिन एक युवा स्वामी मेरे पास काँच का एक फ्लास्क (बर्तन) लाया और बोला कि महाराज जानना चाहते हैं कि इसमें क्या है। मैंने उस तरल पदार्थ को सूँघा। फिर एक कागज पर उसमें मिश्रित रूप से विद्यमान सभी पदार्थो का अनुपात लिख दिया। युवक स्वामी कागज लेकर चला गया। दो दिन बाद वही स्वामी एक और पात्र लाया और मैंने भी पूर्ववत् घ्राण-शक्ति से उसका परीक्षण किया। मेरे मन में यह विचार नहीं आया कि आखिर महाराज किसी सुगंधित पदार्थ, चाहे वह कितना ही अच्छा क्यों न हो, का रासायनिक गठन क्यों जानना चाहेंगे। लेकिन जब पुनः तीसरी बार महाराज ने पात्र भेजा और मैंने उसमें विद्यमान रसायनों का अनुपात लिख लिया तो मुझे लगा कि महाराज मेरे रसायनविद् के अहंकार पर आघात कर रहे हैं। मैं पात्र लेकर स्वयं उनके पास गया और पूछा, क्या आप मेरे रसायन-विद् के अहंकार रूपी बुदबुदे को फोड़ रहे हैं?" मुस्कुराते हुए उन्होंने कहा, "तुम्हें समझने में बहुत देर लगी बेटे।" मैं स्तंभित रह गया। और उस दिन से छह महीनों तक मैंने अपनी इस क्षमता को दबा डालने का अथक परिश्रम किया। बाद में मेरी यह क्षमता नष्ट हो गई।

संग्रह या परिग्रह की वृत्ति क्या है और किस तरह वह मेरे भीतर काम कर रही है—यह सिखाने के लिये एक दिन महाराज श्रीरामकृष्ण के पुराने मंदिर के गुलाब के बगीचे में मरे साथ घूमने गये। विभिन्न प्रकार के गुलाब मुझे दिखाते हुए तथा उनकी देखरेख की विधि सिखाते हुए वे एक पौधे के पास खड़े हो गये जो फूलों और अधखिली कलियों से लदा था। वे बोले, "अब तुम बिना संकोच के इस गुलाब को देखकर बोलो कि यह तुम्हें कैसा लगता है।" मैंने कहा, कितना सुन्दर फूल है, कैसा रूप, कितनी मीठी सुगंध। इच्छा होती है कि तोड़कर उसे अपनी नाक से सूघूँ।" तत्काल महाराज ने कहा, "ऐसा मत करना, वरना माली तुम्हें डाँटेगा। यह फूल ठाकुर (श्रीरामकृष्ण) के लिये है। तुम में सौन्दर्य को परखने की क्षमता है; तुम्हारे पास तीक्ष्ण दृष्टि है और ऐसी तेज घ्राणशक्ति भी है। तुम पुष्प के सौन्दर्य एवं सुगंध का आस्वादन दूर से भी कर सकते हो। तुम उसे पाना और परिणाम स्वरूप माली की डाँट क्यों खाना चाहते हो? जो यह जानता है कि सब कुछ ठाकुर का है वह उनकी सृष्टि का आस्वादन और अधिक अच्छी तरह से कर सकता है और उसे आसक्ति एवं परिग्रह जन्य दुष्परिणामों का कष्ट नहीं भोगना पड़ता।

समझे ?" "मैं ऐसा ही करने का प्रयत्न करूँगा ।" मैंने कहा । कैसे सारगर्भ, गंभीर थे उनके उपदेश ! कितने सटीक और सुस्पष्ट !

एक दिन महाराज ने मुझसे कहा, "तुमने वनस्पति शास्त्र पढ़ा है (मैंने उन्हें यह नहीं बताया था) अतः तुम्हें ज्ञात होगा कि पौधों को पानी देने का श्रेष्ठतम समय सूर्योदय के ठीक पहले और सूर्यास्त के ठीक बाद का होता है । इस छोटे से मेग्लोलिया के पौधे को देखते हो ? प्रतिदिन इसे दो बाल्टी पानी से सींचना ।" मैं उनके इस आदेश का पालन करने लगा । लेकिन एक दिन मुझे कार्यवश कलकत्ता जाना पड़ा । रात को लौटने पर मुझे पौधे में पानी देने की बात याद आई और मैंने दो बाल्टी पानी उस पौधे को दे दिया । दूसरे दिन टहलते समय पता नहीं कैसे महाराज ने जान लिया कि उस पौधे को ठीक समय पर पानी नहीं दिया गया है । उन्होंने तीक्ष्ण दृष्टि से मेरी ओर देखते हुए कहा, "कल पौधे को समय पर पानी दिया था ?" "नहीं महाराज" मैंने कहा, क्योंकि मैं रात को लौट पाया था और लौटते ही मैंने पौधे को दो बाल्टी पानी दे दिया था ।" महाराज ने कहा, तुमने किसी दूसरे व्यक्ति को ठीक समय पर पानी देने हेतु कहा क्यों नहीं ? मैंने, तुम्हारे गुरु ने, तुम्हें एक छोटा-सा काम करने को कहा और तुमने इसमें भी ध्यान नहीं दिया; अब तुम्हारा ब्रह्मचर्य कहाँ रहा ? वह भंग हो गया है । गुरु के कथन पर ध्यान न देना बहुत बड़ा अपराध है । मुझे बहुत अफसोस है । मैं नहीं जानता था कि तुम इतने बड़े मूर्ख होगे ।" यह महाराज की पहली डाँट थी, परन्तु मेरे लिये अत्यन्त कटु थी । रोते हुए मैंने क्षमा याचना की । महाराज ने केवल इतना ही कहा, "ठीक है अब ध्यान रखना, आगे से ऐसा कभी मत करना । तुम जानते हो मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूँ । यदि तुम मेरी बात पर ध्यान नहीं दोगे तो तुम कहीं के नहीं रहोगे । ब्रह्मचारी को सदा सजग रहना चाहिये ।"

महाराज की शिक्षा-पद्धति की यह विशेषता थी कि बुरी तरह डाँटते समय भी वे उसे सहने का बल प्रदान करते थे । अतः मुझे कभी भी हताशा नहीं होती थी । मैं स्वयं को निकम्मा कभी नहीं समझता था । वे मेरे बहुत अपने थे अतः उनकी आज्ञा के पालन में मुझे कभी भी कठिनाई नहीं होती थी । उनके शब्द मुझे सदा उनके प्रेम की अभिव्यक्तियाँ ही लगते थे । संघ में उनके कथन का सम्मान और पालन होता था । लेकिन जैसा कि मैं प्रारम्भ में ही कह चुका हूँ, प्रथम भेंट से ही संघाध्यक्ष के रूप में उनके प्रति मेरा भय दूर हो चुका था । मुझे लगता था कि मैं उनका हूँ । कुछ विरले अवसरों पर किसी विषय में उनसे मेरा थोड़ा विवाद होता था लेकिन मैं सदा उनसे उस विषय को अधिक स्पष्ट रूप से समझाने को कहता था जिससे कि मैं उसे अथवा उनके आदेश के महत्व एवं अर्थ को गहराई से समझ सकूँ ।

मार्च 1920 में एक दिन दोपहर को वरिष्ठ संन्यासियों की एक मीटिंग के बाद स्वामी शिवानंद जी ने मुझसे कहा, "तुम्हें अमुक नगर में ठाकुर सम्बन्ध में भाषण देने हेतु जाना होगा ।" महाराज एवं उन (स्वामी शिवानंद जी) से दूर जाने को मैं अनिच्छुक था । अतः मैंने कहा, "मैं नहीं जाऊँगा और मैं श्रीरामकृष्ण के विषय में क्या बोलना है, यह भी नहीं जानता ।" स्वामी शिवानंद जी ने मुस्कुराते हुए कहा, "तुम्हें महाराज द्वारा दिए गये किसी भी आदेश को अस्वीकार नहीं करना चाहिए । कोई भी ऐसा नहीं करता, यहाँ तक कि हम भी नहीं । और क्या हम इतने मूर्ख हैं जो तुम्हें ठाकुर के विषय में सर्वज्ञ समझें ? हम तुम्हें इसलिये भेज रहे हैं कि लोगों को यह बताओ कि तुम कुछ नहीं जानते ।" मैं बड़े असमंजस में था और प्रतिवाद करने वाला था कि "तो फिर आप मुझे क्यों भेज रहे हैं"—इसी समय मैंने

महाराज को कमरे से बाहर आते देखा। उन्होंने कहा, "सुनो पुत्र, भाषण देने में तुम्हें कोई कठिनाई नहीं होगी।" लेकिन मैंने कहा, "पर महाराज, मैं सचमुच ठाकुर के विषय में कुछ नहीं जानता। कृपया मुझे अपने से दूर न कीजिये।" महाराज ने उत्तर दिया, "आओ, मैं तुम्हें भाषण देना सिखाता हूँ। सभापति जब तुम्हें भाषण के लिये बुलाये तो अपने स्थान से उठना, पहले उनका अभिनंदन करना, उसके बाद श्रोताओं का संबोधन करना और उन सभी को ठाकुर के रूप मानकर कुछ क्षणों के लिये अपने मन में उनका ध्यान करना। तुम देखोगे कि वे तुम्हारे मुख से बोलने लगेगें। यह जरा भी कठिन कार्य नहीं है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि सब कुछ भली भाँति हो जायगा।" इसके बाद मैं कुछ नहीं कह सका। मुझे ऐसा अनुभव होने लगा कि ठीक ऐसा ही होगा, और दूसरे दिन उनको, स्वामी शिवानन्दजी एवं अन्य वरिष्ठ साधुओं को प्रणाम् कर, उनके आशीर्वाद लेकर मैं मठ से निर्दिष्ट नगर के लिये रवाना हुआ। वहाँ दिया गया मेरा मुख्य भाषण तथा उस अवसर पर दिये गये दो-तीन अन्य भाषणों की लोगों ने काफी प्रशंसा की। लेकिन मैंने एक बड़ी भूल कर दी। मैंने उस नगर में अपने पहुँचने की तथा भाषण की कोई सूचना महाराज को नहीं दी। एक विचारहीन युवक की भाँति मैं सब कुछ भूल गया और उसके बाद बीमार पड़ गया। कई दिन बीत गये और मैंने उन्हें पत्र नहीं लिखा। अंततः जब मैं मठ वापस लौटा तब तक महाराज दूर किसी अन्य केन्द्र को चले गये थे। स्वामी शिवानन्द जी ने मुझे बुलाया और बताया कि महाराज कुछ दिनों तक मेरे लिये बहुत चिंतित थे क्योंकि उन्हें मेरा कोई समाचार नहीं मिला था। वे मुझसे रुष्ट भी थे। यह सुनकर मुझे बड़ा दुःख हुआ और उससे भी अधिक कष्ट मुझे इसलिये भी हुआ कि मुझे उनसे क्षमा प्राप्त करने के लिये दो-तीन महीने प्रतीक्षा करनी पड़ी। उन्होंने पत्र में लिखा था, "समाचार को प्रतीक्षा में मुझे और कष्ट मत देना।" पाठकों को अब यह समझने में कोई दुरुहता महसूस नहीं होगी कि गुरु के पादपद्मों में पूर्ण समर्पण करने में मुझे कोई कठिनाई क्यों नहीं हुई थी?

सन् १९२० में अन्य तीन व्यक्तियों के साथ मुझे बनारस के अपने केन्द्र में भेजा गया। वहाँ मुझे पुस्तकालय का कार्य दिया गया। यहाँ एक चिकित्सालय है तथा अन्य गतिविधियाँ हैं। हमारे वहाँ पहुँचते ही वहाँ के पुराने कार्यकर्ताओं के कारण कुछ समस्याएँ पैदा हुईं। ये अच्छे लोग थे लेकिन संन्यास-जीवन का महत्व नहीं समझते थे। वरिष्ठ संन्यासियों और मठ से भेजे गये युवा संन्यासियों के बीच इतना मन-मुटाव हो गया था कि महाराज और संघ के सचिव स्वामी सारदानंद जी को समस्या सुलझाने हेतु आना पड़ा। इस अवसर पर महाराज ने मुझे बहुत-सी बातें सिखाईं और उनके प्रति मेरा प्रेम एवं समर्पण स्थायी हो गया। एक दिन उन्होंने मुझे एकांत में बुलाया और कहा, "तो तुम सम्राट् की सेवा में हो।" मैंने उत्तर दिया, "आपको यह किसने कह दिया?" (जब पुराने वरिष्ठ संन्यासियों ने मुझे उस केन्द्र से हटाने का प्रयत्न किया था तब मैंने उन्हें कहा था, तुम यह नहीं कर सकोगे क्योंकि मैं "सम्राट् की सेवा" में हूँ और महाराज की आज्ञा के बिना मैं यहाँ से नहीं जाऊँगा।) महाराज ने मुस्कुराते हुए कहा, "मुझे सब समाचार मिलते हैं। शर्मिन्दा मत होओ। मैं तुम पर अपनी मुहर लगाऊँगा। लेकिन तुम्हें एक बात का अनुभव करना चाहिए। युवराज को अपने पिता के साम्राज्य के विस्तार का ज्ञान होना चाहिये। केवल यह कहने मात्र से कि मैं युवराज हूँ, न तो संतोष हो सकता है और न ही प्रभुत्व का प्रदर्शन। अतः तुम अध्यात्म के अश्व पर सवार होकर पिता के साम्राज्य का

अवलोकन करो।" अपनी साधना और कर्त्तव्य के विषय में इस नये दृष्टिकोण से मेरी सीमित धारणाओं का आच्छादन दूर हो गया और मुझे नया आलोक प्राप्त हुआ। मुझे अनुभव होने लगा कि उन्होंने मुझे स्वीकार कर लिया है तथा अब मेरा यह कर्त्तव्य है कि अपने जीवन को इस तरह गढ़ूँ कि उनका योग्य शिष्य बन सकूँ।

मैंने उनसे विधिवत् मंत्र-दीक्षा का निवेदन किया। इस पर उन्होंने कहा, "मैंने तुम्हें ठाकुर के नाम का जप करने को कहा है न।" लेकिन उसके साथ कोई क्रिया अनुष्ठान नहीं हुआ था इसलिये वह मुझे पर्याप्त नहीं लग रहा था। अतः मैंने कहा, "लेकिन यह तो कोई मंत्र नहीं है।" इस पर महाराज अत्यंत गम्भीर हो गये। और केवल इतना कहा, "मैंने जसा कहा है. वैसा करते जाओ।" बगीचे में टहलते हुए उन्होंने अचानक कहा, "जानते हो। सीमित अथवा सशर्त धैर्य, धैर्य नहीं अधैर्य ही है। धैर्य की कोई सीमा नहीं होनी चाहिये। धैर्य का अभ्यास करने से अहंकार का नाश होता है। और जब तक अहंकार है तब तक भगवान हृदय में प्रकाशित नहीं होते। पुत्र, साधना करो, इतनी साधना करो कि तुम्हें यह दृढ़ निश्चय हो जाये कि मैं जो कुछ कहता हूँ वह तुम्हारे भले के लिये ही है।" अत्यंत उत्साहपूर्वक मैंने कहा, "इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है।" इस पर महाराज ने अत्यंत मधुर और प्रेमपूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देखकर मुस्कुरा भर दिया।

उनके प्रति मेरी श्रद्धा-भक्ति निरंतर बढ़ती गयी और जब मैंने सुना कि श्रीरामकृष्ण के जन्म दिन पर वे भार में कुछ लोगों को संन्यास में दीक्षित करेंगे तो मैंने भी सर्वत्याग के उस लिंग को धारण करने हेतु उनसे याचना की। उन्होंने कहा, "बेटा, इसके लिये तुम्हें संघ के कुछ नियमों का पालन करना होगा और यह सब व्यवस्था सुधीर (स्वामी शुद्धानंद) के अधीन है। अगर वह अनुमति दे तो मैं तुम्हें संन्यास दे दूँगा।" मैं दौड़ा-दौड़ा स्वामी शुद्धानंद के पास गया और जब मैंने उनसे महाराज की बात कही तो उन्होंने उत्तर दिया, "नहीं, तुमने केवल एक वर्ष ब्रह्मचारी के रूप में व्यतीत किया है और तुम संन्यास माँग रहे हो। तुम्हें दो वर्ष प्रतीक्षा करनी होगी।" बहुत उदास होकर जब मैंने महाराज से यह बात कही तो उन्होंने बड़े प्रेम से कहा, "इतने उदास मत होओ। हमें नियम का पालन करना चाहिए। लेकिन मैं तुम्हें गेरुआ वस्त्र दूँगा। विधिवत् संन्यास बाद में होगा।" इस प्रकार मुझे उनके पवित्र कर कमलों से संन्यास का वस्त्र मिला। कुछ दिनों बाद मुझे बेलुड़-मठ लौटने और वहाँ उनकी प्रतीक्षा करने को कहा। जब मैं उनसे विदा लेने गया तो वे बोले, "जब तक तुम्हें अन्य किसी स्थान पर नहीं भेजा जाता तब तक अधिकाधिक समर्पण की साधना करो।"

श्रीरामकृष्ण जन्मोत्सव के कुछ दिनों पूर्व महाराज बेलुड़ मठ लौटे। इस बार मैं अधिक आत्मविश्वास, निर्भयता और आनन्द के साथ उनके निकट गया। साष्टांग प्रणिपात करने पर अपने चेहरे पर दिव्य मुस्कान के साथ उन्होंने मुझसे पूछा, "कैसे हो बेटा। सब ठीक है न?" "जी हाँ, महाराज"—मैंने उत्तर दिया। और होगा भी क्यों नहीं। अब मैं उनकी सत्ता की अन्दर-बाहर सर्वत्र अनुभूति करने लगा था। आनन्द की एक महान् लहर का मुझे गहरा अनुभव होने लगा था।

श्रीरामकृष्ण जन्मोत्सव का शुभ दिन उपस्थित हुआ, जिसका ठाकुर के भक्त और प्रशंसक बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा करते हैं। मठ प्रांगण लोगों से भरा था। दोपहर चार बजे लगभग ३०,००० लोग उपस्थित थे। उस दिन मुझे मुख्य मठ-भवन

के प्रहरी के रूप में नियुक्त किया गया था। मेरा कार्य उन्हीं व्यक्तियों को श्रीरामकृष्ण के महान् पार्षदों, विशेषकर स्वामी ब्रह्मानंद जी के दर्शनों के लिये ऊपर जाने देना था जिन्हें मैं पहचानता था। मुझे अनेक लोगों को भीतर जाने से रोकना पड़ा था। जिन्हें मैं नहीं पहचानता था किन्तु जो महाराज से घनिष्ट रूप से परिचित थे, वे मेरे निषेध की उपेक्षा कर ऊपर चले गये थे। लगभग पाँच बजे के समय एक वृद्धा माता अन्य महिलाओं के साथ आईं और मुझे कहा, "बेटा, राखाल से कहो कि 'अमुक की माँ' मिलना चाहती है।" महाराज को उनके नाम से संबोधित करने वाली महिला निश्चय ही उनकी अत्यंत परिचित होंगी, यह सोचकर मैंने कहा, "आईये माँ" और उत्सुकतावश मैं भी उनके पीछे-पीछे गया। महाराज बरामदे में अपनी बड़ी कुर्सी पर बैठे थे। वहाँ पहुँचने पर उन माताजी ने कहा, "कैसे हो राखाल।" इस प्रश्न का उत्तर दिये बिना महाराज ने पूछा, "क्या तुम वह लाई हो?" और बच्चे के समान जल्दी से उनके पास आये और प्रतीक्षा किये बिना कंधे से लटक रही, उनकी साड़ी के एक कोने में बंधी, एक पोटली को खोलकर नारियल और चासनी के बने लड्डू निकालकर इस तरह खाने लगे मानो वे स्वर्गीय मिष्ठान्न हों। मैं तो स्तंभित रह गया। मुझे महान् स्वामी के स्थान पर एक दिव्य बालक दिखाई दिया। मुझे बाद में पता चला कि वे ठाकुर की एक महान् महिला भक्त थीं और उनके जीवन काल में उन्हें यह मिठाई खिलाया करती थीं। श्रीरामकृष्ण ने उन्हें दर्शन देकर कहा था कि वे महाराज को यह मिठाई देवे क्योंकि उन्हें खिलाना ठाकुर को खिलाने के समान ही होगा। इस घटना के बाद इस बारे में मेरा यह संदेह पूरी तरह दूर हो गया कि ठाकुर सच्चे भक्तों को दर्शन देते हैं। मुझे एक बात और याद है। जब महाराज मिठाई खा रहे थे तब शिवानंद जी अपने कमरे से आये और कहने लगे, "राजा, राजा, मेरे लिये भी कुछ छोड़ो।" ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिनका समाधान केवल इन महापुरुषों को ही ज्ञात है। हमारी नकारात्मक या सकारात्मक व्याख्याओं का इस विषय में कोई महत्व नहीं है।

मैं पहले कह चुका हूँ कि महाराज ने मुझे एक विदेशी नाम दिया था। एकान्त में वे मुझे उसी नाम से पुकारते थे और मुझे विदेशी कहकर मुझसे अंग्रेजी में बातचीत करते हुये कहते थे, "क्या तुम जानते हो कि पाश्चात्यवासी तितिक्षा को बहुत महत्व देते हैं। उनके अनुसार सहिष्णुता एक महान् सद्गुण है। इसमें कोई शक नहीं है। लेकिन मैं चाहता हूँ कि तुम इसके ऊपर उठो। तुम्हारे पास परामर्श के लिये आने वाले लोगों के साथ सहिष्णुता के बदले सहानुभूति के साथ व्यवहार करना। देखो, सहिष्णुता में पीड़ा और कुछ मात्रा में बड़प्पन का भाव रहता है। हृदय में इन भावों के रहते तुम दूसरों के हृदय को कभी स्पर्श नहीं कर सकते। सहानुभूति के द्वारा ही हम दूसरों की सेवा और सहायता कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त मैं तुम्हें अब एक बहुत महत्वपूर्ण बात कहने जा रहा हूँ जो बहुत से लोग नहीं जानते। जो केवल सहिष्णुता का अभ्यास करते हैं, वे अनजाने ही अपने अहंकार की वृद्धि करते जाते हैं। सत्य तो यह है कि वे किसी की सहायता नहीं कर पाते और धीरे-धीरे सभी उन्हें छोड़ जाते हैं क्योंकि कोई भी सर्वदा स्वयं को अज्ञानी, दोषपूर्ण, पापी और व्यर्थ समझना नहीं चाहता। इसके बदले सहानुभूति के द्वारा तुम स्वयं को सहाय्य व्यक्ति के समकक्ष खड़ा कर उसे बल प्रदान करते हो। तुम उसकी भावनाओं को ठेस पहुँचाये बिना उसे ऊपर उठाते हो और उसे कभी हीन-बोध नहीं होने देते। स्वयं को दूर बनाये रखने से, जैसा कि सहिष्णुता के व्यवहार से होता है, वास्तविक

सहायता सम्भव नहीं है। सर्वोपरि, पुत्र, एक बात सदा याद रखना—संन्यासी के रूप में तुम्हारा कार्य सेवा है, दया या दान करना नहीं।" इस अपूर्व उपदेश ने मेरे अनेक अज्ञान-आवरण दूर कर दिये और यह अभी भी मुझे प्रेरणा प्रदान कर रहा है।

●

पोरबन्दर में स्वामी विवेकानन्द

—स्वामी निखिलेश्वरानन्द

सम्पादक, रामकृष्ण ज्योत, रामकृष्ण आश्रम, राजकोट

पोरबन्दर! साधु-सन्तों की भूमि पोरबन्दर! सुदामापुरी नाम से सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर पोरबन्दर! महात्मागांधी का पावन जन्म स्थान पोरबन्दर! पोरबंदर नाम सुनते ही श्रद्धापूर्ण भाव से मस्तक झुक जाता है। यह श्रद्धा तब बढ़ती है जब मालूम होता है कि विविध रूप से धन्य बने हुये इस पोरबन्दर नगर में आज से एक सौ वर्ष पहले सतत चार महीनों तक विश्व मानव स्वामी विवेकानन्द ठहरे थे। जब स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक के रूप में देश भर में भ्रमण कर रहे थे तब वे सर्वाधिक समय तक पोरबन्दर में ही रहे थे। इस ऐतिहासिक महत्वपूर्ण एवं रोचक घटना से हमें परिचित होना चाहिए।

कलकत्ता से उत्तर प्रदेश जाकर राजस्थान आदि स्थानों का परिभ्रमण करने के बाद स्वामी जी ६ दिसम्बर, १८६१ ई० को गुजरात में आए। अहमदाबाद, वढ़वाण, लिम्बडी आदि स्थानों पर घूमकर जूनागढ़ आए। उस समय नडियाद के निवासी श्री हरिदास विहारीदास देसाई जूनागढ़ के दीवान थे। दीवान जी ने उनका अतिथि सत्कार किया। जब स्वामीजी गिरनार पर तपस्या करने गये तब उन्होंने उनकी देखभाल की। दोनों की मित्रता इतनी पक्की हो गई कि बाद में स्वामीजी ने अमेरिका से दीवान जी को कई महत्वपूर्ण पत्र भी लिखे थे। जूनागढ़ से द्वारका, सोमनाथ, भुज, मांडवी आदि जगहों स्वामी जी ने तीर्थयात्रा की।

जूनागढ़ उनके लिए ऐसा केन्द्र स्थान था जहाँ से वे कच्छ, सौराष्ट्र का भ्रमण कर रहे थे। कुछ समय बाद दीवान जी के पास से पोरबन्दर के दीवान शंकर पांडुरंग पंडित का परिचय पत्र लेकर वे पोरबन्दर की ओर जाने के लिए रवाना हुए। पोरबन्दर रेलवे स्टेशन पर नगर के दारोगा श्री रणछोड़ दास जी ने उनका स्वागत किया और उनको शंकर पंडित के निवास स्थान पर ले गए। उस समय शंकर पंडित की 'प्रशासक (Administrator) के रूप में नियुक्ति हुई थी। वहाँ पहुँच कर स्वामी जी को मालूम हुआ कि शंकर पांडुरंग अपने घर में नहीं है अतः वे नीचे जीने के पास बैठ गए। जब दीवान जी आए तब उनका हाथ पकड़कर ऊपर ले गए। दारोगा उनकी प्रतीक्षा में नीचे बैठा था क्योंकि इसके पूर्व उसे सूचना मिली थी कि स्वामी जी के रहने की व्यवस्था शहर के 'शिव मंदिर' में की जाए और उनके लिए विशेष भोजन का प्रबन्ध किया जाय। किन्तु अब उसे सूचना मिली कि स्वामी जी दीवान जी के साथ

ही रहेंगे। उनके लिए तयार किया गया भोजन ब्राह्मणों को बाँट दिया गया। दूसरे दिन दारोगा स्वामी जी को नगर दर्शन के लिए ले गया तब उसे मालूम हुआ कि स्वामी जी परम्परागत सामान्य संन्यासी न थे, वे रसिक भी थे।

पोरबन्दर 'सुदामापुरी' नाम से प्रसिद्ध है अतः वे सर्वप्रथम सुदामा मंदिर गये और दर्शन कर प्रभावित हुए। उनके बाद शंकर पंडित का समृद्ध ग्रंथालय देखकर विशेष प्रभावित हुए। स्वामी जी के गुरुभाई स्वामी शिवानन्द जी—महापुरुष महाराज के अनुसार स्वामी जी दो बार पोरबंदर आये थे! प्रथम बार आए तब उनके ग्रन्थालय से बहुत प्रभावित हुए थे इसलिए पंडित जी ने उनको निमंत्रण दिया कि चाहे जितने दिन आप वहाँ रहकर ग्रन्थालय का उपयोग कर सकते हैं। इस ग्रंथालय के आकर्षण से ही वे दूसरी बार पोरबंदर आये थे। स्वामी जी के अन्य गुरु भाई स्वामी अभेदानन्द जी की बंगाली भाषा में लिखी गई आत्म-कथा से प्रमाण मिलता है कि स्वामी जी दो बार पोरबंदर आये थे। उन्होंने लिखा है कि तीर्थ यात्रा में वे पोरबंदर गये तब दो दिन वे शंकर पांडुरंग पंडित के अतिथि बने थे। उन्होंने स्वामी अभेदानन्द जी से कहा था कि थोड़े दिन पहले एक अंग्रेजी भाषा से परिचित बंगाली संन्यासी स्वामी सच्चिदानन्द अल्प समय के लिए यहाँ पर आये थे। स्वामी अभेदानन्द जी समझ गये कि यह सच्चिदानन्द ही उनके गुरुभाई नरेन्द्रनाथ याने कि स्वामी विवेकानन्द थे।

स्वामी जी अपनी दूसरी मुलाकात में पोरबंदर में अधिक समय रहे थे। कुछ लोग मानते हैं कि ग्यारह महीने रहे थे परन्तु यह बात उचित नहीं लगती क्योंकि स्वामी जी का गुजरात प्रवास छः-सात महीने में समाप्त हुआ था। नवम्बर ९१ में वे अजमेर (राजस्थान) में थे और मई ९२ में वे महाबलेश्वर (महाराष्ट्र) में थे। शंकर पांडुरंग पंडित की पुत्री उमा राव ने संस्कृत में 'शंकर-जीवन-आख्यान' लिखा है, जिसमें निर्देश किया है कि स्वामी विवेकानन्द शंकर पांडुरंग पंडित के साथ एक परिवार के सदस्य के रूप में चार महीने रहे थे (श्लोक—१७/३३-३४) यह बात अधिक विश्वसनीय प्रतीत होती है। श्री रामकृष्ण का मठ एवं श्री रामकृष्ण मिशन के ग्यारहवें परमाध्यक्ष स्वामी गंभीरानन्द जी ने 'स्वामी विवेकानन्द' नामक अपनी बंगला पुस्तक में लिखा है कि—"स्वामी जी पोरबन्दर में ग्यारह महीने रहे थे, परन्तु यह संभव नहीं है। हो सकता है कि ग्यारह महीने के बदले ग्यारह सप्ताह रहे हों!" अस्तु, यह बात निश्चित ही है कि पंडित जी के ग्रन्थालय ने उन्हें दीर्घकाल तक जकड़कर रखा था। स्वामी जी पोरबन्दर में भोजेश्वर बंगले में रहे थे इस बात का प्रमाण भी 'शंकर-जीवन-आख्यान' के निम्न लिखित श्लोक में मिलता है :—

आगतेषु सुविख्यातस्य तस्यासीदतिथिमहान्।
विवेकानन्द योगीन्द्रः स्वामी संसर्गपावन :॥
देश निवर्तमानोऽयं यतीशो द्वारकापुरात्।
भोजेश्वर गृहस्यग्रं नौकास्थः समवैअत॥
(१७/२७-२४)

स्वामी जी आप पश्चिम के देशों की यात्रा कीजिए :

राय बहादुर शंकर राव के पूर्वज कोंकन में थे। उनकी माता जी अत्यन्त धर्मपरायण थीं। एक साधु ने उन्हें आशीर्वाद दिये थे—'अष्टपुत्रा पंचकन्या भव।' यह आशीर्वाद उनके लिए फलदायी बने। पिता नारायण पंडित ने आठ में से एक पुत्र शंकर को अपने स्वर्गस्थ भाई पांडुरंग को दत्तक के रूप में दिया था जिससे स्वर्गस्थ आत्मा को पिंडदानादि मिलता रहे।

शंकर राव ने बम्बई के 'एलफीन्स्टन कॉलेज' से एम० ए० की परीक्षा २५ वर्ष की उम्र में सन् १८६५ में पास की और 'डेक्कन कॉलेज' पूना में प्राफेसर बने। १८७१ में सूरत में डीप्युटी कलक्टर के रूप में आये तब उन्होंने कसुंबा गाँव के लोगों को बाढ़ के समय बचा कर ऐसी सहायता प्रदान की कि गाँव के लोगों ने गाँव का नया नामकरण किया—'शंकर पेठ'। १८७४ से ब्रिटिश सरकार ने उन्हें ओरियन्टल इन्टरनेशनल कांग्रेस में भाग लेने के लिए भेजा। इंगलैण्ड से लौटने के बाद १६ भाषाओं से परिचित होने के कारण उनकी नियुक्ति बम्बई सरकार में ओरिएन्टल ट्रांसलेटर के रूप में हुई।

सन् १८८६ में उनकी नियुक्ति बम्बई हाइकोर्ट में रजिस्ट्रार के रूप में और कुछ समय के बाद पोरबन्दर में एडमिनिस्ट्रेटर के रूप में हुई।

श्री शंकर राव संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित एवं कठोर परिश्रमी थे। अपने कार्य में व्यस्त रहते हुए भी उन्होंने गहन अध्ययन तथा लेखन कार्य किया था। तुकाराम के अभंगों का संकलन उनके मार्गदर्शन में हुआ। कालिदास के 'रघुवंश' और 'मालविकाग्निमित्र' का संपादन भी उन्होंने किया था। ऋग्वेद के प्रचार के लिए उन्होंने 'वेदार्थयत्न' नामक पत्रिका शुरू की थी। 'अथर्ववेद' का सम्पादन कार्य अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण रूप से किया था। सतत परिश्रम के कारण १८ मार्च, १८९४ में बम्बई में उनका निधन हुआ।

श्री शंकर पंडित की संस्कृत रचनाओं की प्रशंसा देश-विदेश के विद्वानों ने की थी। प्रसिद्ध विद्वान प्रो० मैक्समूलर ने कहा था—"The editions of sanskrit text Published at Bombay by Prof. Bhandarkar and Mr. S. P. Pandit and others need not Fear comparison with the best works of European Scholars."

ऐसे विद्वान पंडित के साथ स्वामी जी की दोस्ती जम जाय यह स्वाभाविक ही है। पंडित जी वेदों के अनुवाद का महान कार्य कर रहे थे इसमें स्वामी जी ने अत्यन्त उदारता से सहायता की। साथ ही स्वामी जी का संस्कृत भाषा पर प्रभुत्व, उनकी तेजस्वी मेधा तथा बहुश्रुतता के कारण वेद के कूट मंत्रों का अर्थ करने की क्षमता और उनका वेदान्त का हस्तामलकवत् ज्ञान देख कर पंडित जी मुग्ध क्यों न बने!

स्वयं स्वामी जी ने भी पंडित जी के साथ अधिक समय बिताकर उनके ज्ञान का पूरा लाभ उठाया था। इसी समय इन्होंने पाणिनि के महाभाष्य का अध्ययन पूरा किया। पंडित जी देश की स्थिति से परिचित थे। अतः उन्होंने स्वामी जी से कहा—"स्वामी जी ऐसा लगता है कि यहाँ आप विशेष कुछ नहीं कर सकेंगे। लोग आपका आदर भी नहीं कर सकेंगे। अतः आप पश्चिम के देशों का प्रवास कीजिये। आंधी-तूफान की तरह आप पश्चिम को वश कर सकेंगे। सनातन धर्म का प्रचार कर आप पाश्चात्य संस्कृति पर जबरदस्त प्रभाव डाल सकेंगे। बाद में भारत के लोगों की आँखें खुलेंगी और वे आपके पैरों में पड़ेंगे।" पंडित जी ने उन्हें फ्रेंच भाषा सीखने का भी अनुरोध किया। स्वामी जी ने फ्रेंच भाषा सीखाकर फ्रेन्च भाषा में एक पत्र लिखकर कलकत्ता अपने गुरु भाइयों को भेजा। पहले तो कुछ समझ में नहीं आया, परन्तु बाद में समझ में आया कि यह फ्रेंच भाषा में लिखा हुआ पत्र प्रिय नरेन्द्रनाथ का था।

इस समय स्वामी जी बहुत बेचैन थे। उन्हें अब लग रहा था कि अपने गुरुदेव के शब्द सही थे और उनमें समस्त जगत में क्रांति लाने की शक्ति थी। भारत की आध्यात्मिक नवजागरण की बात

उनके मन-मस्तिष्क में सदैव खलती थी। जितने महाराजा एवं दीवानों के सम्पर्क में आए उन सबको अपना सन्देश दिया कि अब क्या कुछ करने का समय आ गया है। जैसे-जैसे वे वेदान्त का गहन अध्ययन करते गए वैसे-वैसे उनको विश्वास होता गया कि सचमुच भारत ही सभी धर्मों की जननी है, आध्यात्मिकता का अखंड स्रोत है, और सभ्यता का जन्म स्थान है। पंडित जी ने स्वामी जी को विदेश जाने का सुझाव दिया वह उन्हें अच्छा लगा क्योंकि उन्हें भी लगा कि विदेशी सभ्यता को भारत का सही मूल्य तब समझ में आएगा जब वे पाश्चात्य देशों में जाकर सनातन धर्म की महिमा का प्रचार एवं प्रसार करेंगे।

इस तरह शंकर पांडुरंग पंडित के साथ स्वामी जी का सम्पर्क अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा ऐतिहासिक रहा। दीर्घ समय तक ये दोनों विद्वान उदात्त विचारों का आदान-प्रदान करते रहे। वेदों का अध्ययन एवं भाषान्तर हुआ, देश-विदेश के बारे में चर्चा हुई। इस प्रकार स्वामी जी के भविष्य को महान प्रचार कार्य की योजना की नींव पोरबन्दर में डाली गई।

करेला और कोलेरा :

स्वामी जी जब भोजेश्वर बंगले में शंकर पंडित के साथ निवास कर रहे थे तब कुछ युवकों के साथ उनका मैत्री सम्बन्ध स्थापित हुआ था। उनमें एक थे आचार्य रेवा शंकर अनुपराय दवे, जिनका थोड़े वर्ष पहले एक सौ वर्ष से अधिक आयु में स्वर्गवास हुआ। उन्होंने अपने संस्मरणों में कहा था कि स्वामी जी जब भोजेश्वर बंगले में रहते थे तब वे अपने मित्र माधव के साथ बार-बार उनके पास आते थे। स्वामी जी प्रायः हिन्दी में बातचीत करते थे परन्तु कभी-कभी संस्कृत या बंगाली शब्द का प्रयोग भी उनसे हो जाता था। एक दिन संस्कृत पाठशाला के थोड़े विद्यार्थियों को स्वामी जी के पास लाया गया। उनमें से एक गोविन्द नामक विद्यार्थी को स्वामी जी ने पूछा—"कहाँ तक पढ़े हो ?" गोविन्द ने जबाब दिया—मैं वाराणसी गया था वहाँ सामवेद का अध्ययन किया और छः शास्त्रों का अध्ययन किया है। स्वामी जी ने पूछा—"आगे अध्ययन क्यों नहीं किया ? वापस क्यों लौट आए ?" उसने कहा—मुझे करेला हो गया था इसलिए वापिस आ गया। करेला शब्द सुनते ही स्वामी जी जोर से हँस पड़े। पूरा कक्ष हास्य से गूंज उठा। 'कोलेरा' रोग को इस प्रकार करेला (सब्जी का नाम) कहने से स्वामी जी अपना हास्य नहीं रोक सके।

स्वामी जी के आदेश से गोविन्द ने संस्कृत के थोड़े श्लोकों की आवृत्ति की। उसके बाद उन्होंने रेवा शंकर से पूछा, "तुमने कहाँ तक अभ्यास किया है ?" रेवा शंकर ने कहा, "पंचतंत्र और ईसप की नीति कथा।" दोनों में से उन्होंने एक-एक श्लोक सुना दिया। स्वामी जी प्रसन्न होकर मुस्कराये। बाद में वे घूमने गये। भोजेश्वर बंगले के पास के रणप्रदेश में जब वे घूमने जाते थे तब सदैव उनके पास उनका दंड रहता था और उनके साथ दीवान जी भाला लेकर चलते थे।

'समस्त जगत में तहलका मचा सकता हूँ'—

स्वामी जी जब पोरबन्दर महाराजा के महल में निवास कर रहे थे तब एक दिन एक विचित्र घटना घटित हुई। स्वामी जी के गुरु भाई स्वामी त्रिगुणातीतानन्द जी तीर्थ भ्रमण करते-करते पोरबन्दर आ पहुँचे और अन्य साधुओं के साथ रहने लगे। सभी साधु हिंगलाज तीर्थ के दर्शन करना चाहते थे परन्तु वे अकेले थे। अत्यन्त लम्बी एवं कठिन यात्रा के कारण करांची तक स्टीमर में और बाद में हिंगलाज तक ऊँट पर बैठकर जाने का उन्होंने सोचा परन्तु उनके पास पैसे नहीं थे। अब क्या करना चाहिए उसकी चिन्ता थी। उस

समय एक साधु ने कहा कि पोरबन्दर के महाराज के साथ एक विद्वान परमहंस महात्मा निवास कर रहे हैं वे अंग्रेजी भाषा अच्छी जानते हैं। स्वामी त्रिगुणातीतानन्द वहाँ जाकर महाराजा से कहकर हमारे खर्च की व्यवस्था करा दे सकते हैं। त्रिगुणातीतानन्द जी समूह के मुखिया बनकर महल की ओर गये। उस समय स्वामी जी महल की छत पर टहल रहे थे। उन्होंने साधुओं को दूर से आते हुए देखा। त्रिगुणातीतानन्द जी को इस समूह में देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ। और उपेक्षा भाव के साथ वे उनको मिलने के लिए नीचे आये। अचानक ही अपने प्रिय नेता को देखकर त्रिगुणातीतानन्द जी अत्यन्त प्रसन्न हुये। दूसरी ओर उनका पीछा करने के कारण स्वामी जी ने स्वामी त्रिगुणातीतानन्दजी को डाँटा। अपने वचाव में त्रिगुणातीतानन्दजी ने कहा—"मुझे बिलकुल मालूम नहीं था कि आप यहाँ हैं।" मैं तो मात्र हिंगलाज जाने के लिए खर्च माँगने के लिये आया था। प्रथम तो स्वामीजी ने सहायता करने से इन्कार करते हुए कहा कि संन्यासियों को पैसे नहीं माँगने चाहिए। यह सुनकर निराश होकर वे वापस जा रहे थे तब स्वामीजी ने उन्हें बुलाया। वे अपने गुरु भाई को इस प्रकार जाने को कैसे कह सकते हैं। बाद में आवश्यक सहायता की। दोनों कुछ समय एक दूसरे के साथ आनंद से रहे। बातचीत के माध्यम से स्वामीजी ने त्रिगुणातीतानन्दजी (जिनका पूर्वाश्रम का नाम शारदा प्रसन्न था।) से कहा, "शारदा, मेरे लिए गुरुदेव जो कुछ कहते थे उसको मैं अब कुछ कुछ समझने लगा हूँ। सचमुच, मुझे लगता है कि मुझमें ऐसी शक्ति है कि समस्त जगत में तहलका मचा सकता हूँ।"

यहाँ पोरबन्दर में ही प्रथम बार स्वामीजी को शिकागो की धर्मसभा के बारे में जानकारी मिली। यहाँ पोरबन्दर में ही उनको शंकर पांडुरंग पंडित के पास से प्रचार कार्य के लिए विदेश जाने की प्रेरणा मिली। यहाँ पोरबन्दर में ही उन्होंने पाणिनि के व्याकरण का अध्ययन पूरा किया और फ्रेंच भाषा का अभ्यास किया। पोरबन्दर में ही उन्होंने वेदों के अनुवाद कार्य में सहायता की, वेदों का गहन अभ्यास कर भारतीय प्राचीन गरिमा को आत्मसात किया; यहीं वे पोरबन्दर के महाराजा विक्रमालजी के संपर्क में आए। यहीं उन्होंने महान विद्वान शंकर पांडुरंग पंडित के साथ ज्ञानचर्चा में ४ महीनों बिताए। यहाँ पोरबन्दर में हीं प्रथमबार स्वामीजी को अपने जीवन के मिशन की झांकी मिली यहाँ पोरबन्दर में ही उन्होंने अपने गुरु श्रीरामकृष्णदेव के कथनानुसार जगत में तहलका मचा देने की शक्ति का अनुभव किया।

धन्य है पोरबन्दर! विश्व मानव स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक अवस्था में तीन दिन से अधिक किसी भी स्थान पर रहना पसन्द नहीं करते थे। ऐसे स्वामीजी को चार चार महीने तक जकड़ कर रख सका। धन्य पोरबन्दर! भारत के इतिहास की काया पलट करनेवाले महात्मा गाँधी को जन्म दिया।

अतीव हर्ष की बात है कि जिस भोजेश्वर बंगले में स्वामी विवेकानन्द जी कई महीनों तक रहें थे उसे गुजरात सरकार ने १२ जनवरी '९७ के दिन रामकृष्ण मठ एवं मिशन को सौंप दिया है ताकि वहाँ स्वामी विवेकानन्दजी का एक भव्य स्मारक बन सके। फिलहाल १५० वर्ष पुराना यह भवन दयनीय स्थिति में है, शीघ्र इसकी मरम्मत की व्यवस्था रामकृष्ण मठ एवं मिशन द्वारा की जा रही है। भवन का नवनिर्माण इस प्रकार से किया जा रहा है ताकि स्वामीजी की पावन स्मृतियों को यथासंभव क्षुण्ण रखा जा सके। स्वामीजी के आदेशानुसार कुछ जनोपयोगी सेवा कार्यों की योजनाएँ भी प्रारम्भ की जा रही है। यह प्रसन्नता की बात है कि अब देश-विदेश में रहते स्वामी विवेकानन्दजी के अनुरागीगण इस पवित्र स्मारक भवन का दर्शन कर सकेंगे। ☐

साधकों के प्रश्न :

स्वामी ब्रह्मेशानन्द के उत्तर

प्रश्न सं० १—श्री श्री ठाकुर ने विषयानन्द, भजनानन्द और ब्रह्मानन्द की उत्तरोत्तर श्रेष्ठता का उल्लेख किया है। तो फिर जिस साधक को कुछ-कुछ भजनानन्द का रस मिलने लगा है उसे विषयानन्द भी क्यों खींचता रहता है ?

उत्तर—विषयानन्द का आकर्षण इतनी आसानी से नहीं जाता। 'गीता' के अनुसार विषयों से विरत रहने पर भी उनका रस या उनके प्रति आसक्ति परमात्म-साक्षात्कार के बाद ही निवृत्त होती है। (२ : ५९) थोड़ा-बहुत भजनानन्द प्राप्त कर लेना पर्याप्त नहीं है। उसमें अधिकाधिक निमज्जित होना चाहिये और जब तक ब्रह्मानन्द प्राप्त न हो जाय तब तक विषयानन्द से दूर रहना चाहिये। विषयानन्द सर्वथा त्याज्य है, भजनानन्द साधन है और ब्रह्मानन्द लक्ष्य।

प्रश्न सं० २—एक अविवाहित साधक अपने माता-पिता-भाई-बहन आदि के स्नेहपाश में कर्त्तव्य बोध या अपनत्व-बोध वश बंधा है; फलस्वरूप अपनी सम्पूर्ण ऊर्जा अपने मूल लक्ष्य में नियोजित नहीं कर पाता। तो क्या इस अवस्था में उसे अपने कामिनी-त्याग का कोई लाभ नहीं मिल रहा ?

उत्तर परिवार के सदस्यों के प्रति स्नेह बंधन या मोह भी आखिर है तो बंधन ही। यह भी खेत की मुंडेर में एक छिद्र के समान है जिसमें ब्रह्मचर्य के द्वारा ऊर्जा का जल लाया तो जा रहा है लेकिन वह जल मोह रूपी छिद्र से बह जा रहा है। केवल कामिनी-त्याग रूपी एक छिद्र को बंद करना पर्याप्त नहीं है। साधक स्वयं यह अनुभव करने लगेगा कि ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए भी उसे अधिक लाभ नहीं हो रहा है और किसी न किसी दिन उसे ऊर्जाक्षय के इस अन्य मार्ग को बंद करना ही होगा।

प्रश्न सं० ३—एक अविवाहित-असंन्यासी-साधक यद्यपि अपने वयस्क एवं समर्थ संबंधियों से उनके सांसारिकतापूर्ण असत् जीवनयापन को देख उनके प्रति विरक्ति से भर जाता है किन्तु परिवार के निर्मल-निश्छल बालकों एवं अशक्त-असमर्थ वृद्धजनों के प्रति करुणाभाव से छुटकारा पाने में दुःसाध्यता का अनुभव करता है—फलतः बद्ध है—इस दशा से कैसे छूटे ?

समाधान : यह स्थिति ठीक अर्जुन की-सी स्थिति है जो एक ओर तो अपने कुछ संबंधियों को आततायी बताता है और दूसरी ओर गुरुजनों बंधु-बांधवों के प्रति करुणा-कृपा वश लड़ना नहीं चाहता। आप स्वयं स्वीकार करते हैं कि आपको करुणा से छुटकारा पाना कठिन प्रतीत होता है। अर्थात् आपको बंधन का बोध तथा छुटकारा पाने की लालसा तो है पर शक्ति और साहस की कमी है। इसका उत्तर भगवान् ने गीता में यह कहते हुए दिया है :

…क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ-नैतं त्वयि उपपद्यते।
क्षुद्रं हृदय दौर्बल्यं त्यक्तोत्तिष्ठः।……

समस्या सं० ४ : परिजनों की तुच्छ बातों और निराधार समस्याओं से उत्पन्न मनमुटाव,

अशांति एवं कलह के प्रति साधक ममत्व वश निर्लिप्त भी नहीं रह पाता और न प्रयास द्वारा उनके स्वभाव को सुधार ही पाता है और न संसार त्याग का साहस जुटा पा रहा है—वह क्या करे ?

समाधान : संसार जैसा है वैसा ही रहेगा—आप किसी को सुधार नहीं पायेंगे। अतः उस दिशा में प्रयत्न न करें। यथासंभव निर्लिप्त भाव से अपने कर्त्तव्य का पालन करें। अगर पूर्णरूप से बाह्यरूप से संसार त्याग का सामर्थ्य न हो तो आन्तरिक रूप से त्याग करें। पर उसी परिवार में रहते हुए यह करना और कठिन है। बीच-बीच में अपने परिवार से अलग हो निर्जनवास या साधुसंग करें या किसी आश्रम में जाकर रहें।

समस्या सं० ५ : साधक की जीवन-पद्धति से परिजनों के असंतोष और चिढ़ का सामना कैसे किया जावे ?

समाधान : कोई भी व्यक्ति सभी को संतुष्ट नहीं कर सकता। असंतुष्ट लोगों की उपेक्षा करनी होगी।

समस्या सं० ६ : स्नायु-संस्थान के अधिक संवेदनशील हो जाने से साधक को सांसारिक व्यवहार में वेदना-घुटन का अनुभव होता है,—काम-क्रोध-राग-द्वेष की हल्की सी लहर भी उसे व्यथित एवं असंतुलित कर देती है—वह क्या करे ?

समाधान : यदि अपने भीतर उठ रही काम-क्रोधादि की लहरों से आप ग्लानि का अनुभव करते हैं तो यह शुभ-लक्षण है। लेकिन ग्लानि से असंतुलित नहीं होना चाहिये। मन को संतुलित बनाये रख कर साधना करते चलें। संसार तो सदा ही विषम रहेगा, आपको सांसारिक व्यवहार में भी स्वयं को निर्लिप्त व संतुलित बनाये रखने का प्रयत्न करना होगा।

समस्या सं० ७ : आध्यात्मिक-जीवन में ब्रह्मचर्य का कोई विकल्प नहीं। इसकी महिमा, आत्यंतिक महत्व को हृदय में दृढ़मूल करने तथा इसके पालन में उत्साह और आनन्द को बढ़ाने के पक्ष में कृपया कुछ कहें।

समाधान : मानव सुख चाहता है। और लौकिक सुखों में काम-सुख को सबसे बड़ा या अधिक समझा जाता है। यही कारण है कि काम सुख-भोग के प्रति इतना आकर्षण होता है। अगर यह धारणा मन में दृढ़ की जा सके कि ब्रह्मचर्य से भी सुख प्राप्त होता है और वह कामोपभोग के सुख से असंख्यगुना अधिक है तो ब्रह्मचर्य पालन में उत्साह और आनंद मिलेगा। इस विषय में निम्न बातें ध्यान रखें :—

(अ) भोगी व्यक्ति का सुख मूलाधार में केन्द्रित रहता है—जननेन्द्रिय के माध्यम से मिलता है, जबकि संयमी योगी उसी सुख को उठा कर मस्तिष्क में ले जाकर स्थायी बना देता है। यह सुख इन्द्रिय-विषय के सम्पर्क की अपेक्षा नहीं रखता—निरपेक्ष होता है।

(ब) श्रीरामकृष्ण का कथन है कि भगवद्दर्शन का सुख प्रत्येक रोमकूप में रमण-सुख से भी अधिक होता है।

(स) दीपक तेल से जलता है, लेकिन यदि दिये में छेद हो जावे और तेल बह जाये तो दीपक नहीं जल जायेगा। इसी प्रकार कामोपभोग में वीर्यरूपी शक्ति बह जाती है और ओज रूपी दीपक की लौ नहीं जल पाती। ब्रह्मचर्य से ओज की वृद्धि का यही रहस्य है।

(द) सन्तों की जीवनी पढ़ें तथा ब्रह्मचर्य का पालन करने वालों का संग करें। उसके बिना ब्रह्मचर्य की महिमा समझ में नहीं आयेगी और न उसके लिये उत्साह पैदा होगा :

समस्या सं० ८ : सांसारिक (भौतिक वादी-इन्द्रिय परायण) लोग इतने शांत, प्रफुल्ल और

निश्चित क्यों दिखाई देते हैं, जब कि उनके साथ इतनी समस्याएँ, अभाव और उत्तरदायित्व चिपके हुए हैं ? क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है या साधक का भ्रम है ?

समाधान : प्रत्येक व्यक्ति का एक (Centre of Gravity (गुरुत्वाकर्षण का केन्द्र) होता है। धनी का धन, गृहस्थ का स्त्री और पुत्रादि, किसी का अहंकार आदि-आदि। जब तक वह सुरक्षित रहता है तब तक व्यक्ति समस्याओं, अभावों आदि से विचलित नहीं होता। बल्कि अपनी पत्नी, पुत्र, धन, अहंकारादि की पुष्टि के लिये समस्याएँ झेलने, उत्तरदायित्व पालन करने में उन्हें आनन्द ही प्राप्त होता है। लेकिन जिस दिन उनके गुरुत्वाकर्षण के केन्द्र को ठेस पहुँचती है, उस दिन वे पूरी तरह से टूट जाते हैं। इस दृष्टि से जिसने भगवान् को अपना गुरुत्वाकर्षण का केन्द्र बना लिया है, उसको शाश्वत स्थिरता, शांति, निश्चितता और प्रफुल्लता प्राप्त होती है।

समस्या सं० ९ : साधक को यदि छोटी-छोटी सांसारिक प्रतिकूलताओं में घुटन महसूस होती है तो यह उसकी दुर्बलता समझी जाये अथवा त्याग योग्य मानसिक भूमिका ?

समाधान : यह 'छठे' प्रश्न से मिलता-जुलता है। सांसारिक प्रतिकूलताओं को वैराग्य-वृद्धि का कारण बनाइए और संतुलन बनाये रखें।

समस्या सं० १० : यह प्रसिद्ध उक्ति है कि गुरु कृपा भी हो, भगवान् की कृपा भी हो तथा अन्य सभी की कृपा हो किन्तु एक 'मन' की कृपा न होने पर जीव को सिद्धि लाभ नहीं होता। किन्तु क्या गुरु और ईश्वर की कृपा उसके मन की दिशा और स्वभाव में अभीष्ट परिवर्तन कर उसका कल्याण नहीं कर सकती ? मन क्या स्वाधीन और पूर्ण स्वतंत्र सत्ता है ?

समाधान : गुरु केवल मार्ग बता सकते हैं, चलना तो साधक को ही पड़ेगा। एक संत ने कृपा का बड़ा अच्छा अर्थ किया है : कृ = करना, पा = पाना— अर्थात् जिसे करके पाया जाय याने जिसे पुरुषार्थ के द्वारा पाया जाय। भगवान की कृपा और करुणा की भीख माँगने वाले निकम्मों पर कभी कृपा नहीं होती। भगवत्कृपा प्राप्त संतों के जीवन में कठोर परिश्रम, पुरुषार्थ और साधना दिखाई देती है। वे अपने दुर्गुणों और दुष्ट मन के साथ निरंतर संघर्ष करते रहते हैं। जहाँ तक मन की स्वाधीनता का प्रश्न है—वह तो धोबी के घर का धुला कपड़ा है, जिस रंग में डालोगे, वह रंग ले लेगा। सत्संग में रखोगे तो वैसा हो जाएगा, दुःसंग में रखोगे तो बुरा हो जाएगा।

समस्या सं० ११ : धर्म-जगत् में प्रवेश के नियम न होने से निहित स्वार्थ वाले बुद्धिमान किन्तु चालाक लोग इसमें प्रवेश कर लोगों को गुमराह कर अपना उल्लू सीधा करते हैं—इस से विचार शील किंतु श्रद्धाहीन लोगों के लिये धर्म-जगत् उपहास्य तथा श्रद्धावान् मूर्ख लोग यथार्थ धर्म से वंचित हो जाते हैं। क्या इसे रोकने का कोई उपाय है ?

समाधान : धर्मजगत् के नियम क्यों नहीं हैं ? अवश्य हैं। अगर कोई उन्हें न जाने और चालाक व्यक्ति उसे छल ले तो दोष न तो धर्म का है और न यथार्थ धार्मिक लोगों का। धर्म के दिखावों, गौण क्रिया-अनुष्ठानों को यदि नास्तिक लोग हास्यास्पद बताएं, उसका उपहास करें तो इससे यथार्थ—धम को ही लाभ है। वास्तविक धर्म आदर्शों का आत्मसात् करना, जीवन जीना है। यथार्थ धर्म-जीवन-यापन ही धर्म को पुष्ट करने का उपाय है।

समस्या सं० १२ : शास्त्रों से उद्धृत किया जाता है कि "गृहस्थाश्रम" सर्वश्रेष्ठ है और अन्य तीनों आश्रम उस पर निर्भर हैं"—क्या यह

विद्यार्जन (ब्रह्मचर्याश्रम द्वारा) और आत्मज्ञानार्जन (वानप्रस्थी और संन्यासी द्वारा) पर धनार्जन और अन्नार्जन को अतिमहत्ता का प्रतिपादन नहीं है जो मुझे उचित नहीं लगता—या मैं ठीक से समझा नहीं ?

समाधान : गृहस्थाश्रम का उद्देश्य धनार्जन और अन्नार्जन नहीं है। उसका उद्देश्य क्रमिक संयम द्वारा वानप्रस्थ और संन्यास के लिये व्यक्ति तैयार करना है। धर्माचरण और सेवाविहीन गृहस्थाश्रम की कहीं प्रशंसा नहीं की गई है। सभी आश्रमों में संयम, त्याग और सेवा का ही महत्व है, उनके बिना ये आश्रम, आश्रम नहीं रहेंगे। गृहस्थ भी धनार्जन और अन्नार्जन भोग के लिये नहीं अपितु वितरण के लिये करेगा। अतः गृहस्थाश्रम की महत्ता बताकर धन या अन्न-अर्जन को महत्व नहीं दिया गया है।

समस्या सं० १३ : साधक को यदि प्रभुगुणगान, स्तोत्रपाठादि में पर्याप्त आनन्द और तल्लीनता की अनुभूति होती है और इसके लिये उसे उस समय गुरु प्रदत्त मंत्र-जप या ध्यान प्रक्रिया छोड़नी पड़ती है तो यह उसकी निर्दिष्ट आध्यात्मिक साधना का ही समान रूप से अंग है या नहीं ? यह जप-ध्यान के समान प्रभावशाली और लाभकारी है या नहीं ?

समाधान : श्रीरामकृष्ण कहते है कि वेदों का लय गायत्री में और गायत्री का लय ओंकार में होता है। इसी प्रकार उन्होंने कहा है कि तन्मयता होने पर भजन गाते-गाते "निताई आभार माता हाथी" के बदले केवल "हाथी-हाथी" रह जाता है और अन्त में "हा" कहकर समाधि हो जाती है। स्तोत्रादि का लय इष्ट मंत्र में होता है। दोनों परस्पर संबंधित हैं। ध्यान-जप में भी तल्लीनता लाने का प्रयत्न करें। गुरु प्रदत्त मंत्र जप तथा ध्यान प्रक्रिया का नियमित निष्ठापूर्वक पालन करें। धीरे-धीरे स्तोत्रादि पाठ का आनन्द इसमें भी आने लगेगा। दोनों प्रक्रियाएं प्रभावकारी हैं।

तुम क्यों रोते हो, बन्धु ? तुम्हीं में तो सारी शक्ति निहित है। ऐ महान्, अपनी सर्वशक्तिमान प्रकृति को उद्बुद्ध करो; देखोगे, यह सारी दुनिया तुम्हारे पैरों पर लोटने लगेगी। एकमात्र आत्मा ही शासन करती है, जड़पदार्थ क्या शासन करेगा ! अपने को शरीर से अभिन्न समझनेवाले मूर्ख व्यक्ति ही करुण स्वर से चिल्लाते हैं, 'हम दुर्बल हैं, हम दुर्बल हैं'। आज देश को आवश्यकता है साहस और वैज्ञानिक प्रतिभा की। हम चाहते हैं प्रबल साहस, प्रचण्ड शक्ति और अदम्य उत्साह। स्त्रियोचित व्यवहार से काम नहीं बनने का। भाग्य-लक्ष्मी उसी के पास आती है जो पुरुषार्थी है। जिसके सिंह का हृदय है। पीछे देखने काम ही नहीं। आगे ! आगे ! बढ़ चलो ! हम चाहते हैं अनन्त शक्ति, असीम उत्साह, अनन्त साहस और अनन्त धैर्य। तभी महान् कार्य सम्पन्न होंगे।

वेदान्त 'पाप' की बात नहीं मानता, वह केवल 'भूल' की बात स्वीकार करता है; और उसके मत से, तुम सब से बड़ी भूल तो तब करते हो, जब तुम कहते हो, "मैं कमजोर हूँ, मैं पापी हूँ, एक दुःखी जीव हूँ, मुझमें कुछ भी शक्ति नहीं—मुझमें कुछ भी करने की ताकत नहीं।"

—स्वामी विवेकानन्द

अन्दमान : क्या काला पानी है ?

—श्री नन्दलाल टांटिया
कलकत्ता

बचपन से अन्दमान की बहुत तरह की डरावनी बातें सुनी थीं। काला पानी के नाम से लोग भयभीत होते। रामकृष्ण मठ एवं मिशन के उपाध्यक्ष श्रीमद् स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज को पोर्ट-ब्लेयर आश्रम ने पधारने का निमंत्रण बहुत दिनों से दे रखा था। अन्ततः श्रद्धेय महाराज जी का कार्यक्रम ता० १८ मार्च को मद्रास से पोर्ट-ब्लेयर पहुँचने का हुआ। महाराज श्री की बड़ी कृपा है, मैं भी उनके साथ रवाना हुआ। दो घंटे की उड़ान के पश्चात् हम लोग पोर्ट-ब्लेयर पहुँचे। वहाँ हवाई पट्टी पर ही पोर्ट-ब्लेयर मिशन के सचिव, भक्त एवं सरकारी अधिकारी एकत्र थे। लगभग एक बजे पोर्ट-ब्लेयर आश्रम हम लोग पहुँचे। वहाँ ५५ अनाथ बच्चों के आवास एवं शिक्षा की व्यवस्था है। बच्चे ७ वर्ष से १५ वर्ष की उम्र के हैं। ४-५ बच्चे तो विहार की चसनाला खदान की भूमि ध्वस्त हुई थी, उसके हैं। ऐसे दर्जनों बच्चे हैं जिनका संसार में वहाँ के महाराज को छोड़कर कोई दूसरा नहीं है किन्तु महाराज का प्यार भी अद्भुत है। हरेक बच्चे को नाम से बुलाते हैं, उन्हीं के साथ भोजन करते हैं। जब कोई भक्त प्रसाद आदि भेजता है तो उन्हें पहले सूचित कर दिया जाता है कि आप सभी बच्चों सहित प्रसाद भेजें।

श्रीमद् स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज के प्रति वहाँ के गवर्नर श्री ईश्वर प्रसाद गुप्ता की विशेष श्रद्धा है और उन्होंने सविनय निवेदन किया कि आप मेरा आतिथ्य स्वीकार करें। राज्यपाल श्री गुप्ता ने कहा कि आपको तो शायद स्मरण नहीं होगा। १९५८ में आई० ए० एस० पास करने के बाद मंसूरी के एडमिनिसस्ट्रेटिव स्टॉफ कॉलेज में आप ने हम सभी आई० ए० एस० के उत्तीर्ण छात्रों का शिविर किया था। इसी प्रकार की बात मुम्बई में हुई। गत जनवरी माह में महाराजश्री का दीक्षा समारोह हेतु बम्बई में आगमन हुआ। वहाँ भगवान महावीर विकलांग समिति (जो कि 'जयपुर फुट' के नाम से विशेष प्रचलित है) के मानद सचिव श्री मेहता जी को मालूम हुआ कि महाराज जी का आगमन मुम्बई हुआ है तो हम लोग मुम्बई आश्रम उनके दर्शन हेतु पहुँचे। मुम्बई के लोग मेहता जी से खूब परिचित हैं। उच्च सरकारी अधिकारी हैं। उन्होंने भी महाराज जी को स्मरण दिलाया कि १९६३ में आई० ए० एस० के उत्तीर्ण छात्रों के शिविर हेतु महाराज ने उनके बैच को क्लास ली थी। लगभग १५-२० वर्षों तक लगातार सरकार के विशेष अनुरोध पर महाराज तीन दिन आई० एस० एस० उत्तीर्ण छात्रों के बैच को प्रशिक्षण देने हेतु जाते रहे हैं। इन १०-१५ वर्षों से इतना स्ट्रेन न ले सकने के कारण यह नहीं संभव हो पाता है। प्रतिदिन सुबह महाराज द्वारा दीक्षा का कार्यक्रम रहता था एवं सायंकाल रामकृष्ण मिशन के सभागार में प्रवचन। एक दिन महाराज को वहाँ के सचिव ने निवेदन किया कि आप अपनी स्मृतियाँ सुनायें। महाराज

जी ने बताया कि जब वे १५ वर्ष के थे उन्हें स्वामी जी का साहित्य पढ़ने को मिला और वे उससे प्रभावित हुए। आर्थिक अवस्था अति साधारण थी। त्रिचुड़ के घर से मैसूर के आश्रम तक जाने का साधन नहीं था। संयोग से उन्हीं दिनों पूज्य स्वामी शिवानन्द जो महाराज द्वितीय अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ का ऊटी में आगमन हुआ जो कि त्रिचुड़ के पास है। श्री रंगनाथानन्द जी वहाँ दीक्षा हेतु जा पहुँचे। पूज्य महाराज जी ने दीक्षा देने के बाद दक्षिणा मांगी किन्तु उनके पास देने को कुछ भी नहीं था। महाराज ने पास में रखे हुए दो आम उनके हाथ में दिये और कहा—यह मुझे दे दो। रंगनाथानन्द जी ने बताया कि यह उनके जीवन की अद्‌भुत घड़ी रही। ऐसी ही एक घटना मैंने सुनी है कि उन्होंने पूज्य स्वामी अखण्डानन्द जी से निवेदन किया कि महाराज मुझे आशीर्वाद दें। अखण्डानन्द जी ने कहा कि तुमको बड़ा काम करना है। स्वामी जी के काम को आगे बढ़ाओ। आज के दिन विश्व में स्वामी रंगनाथानन्द जी के जैसे वक्ता गिनती के ही हैं। ८९ वर्ष की अवस्था में भी एक घंटा गम्भीर विषयों पर प्रवचन दे पाते हैं। महाराज जी का प्रवचन प्रति शाम को ठाकुर रामकृष्ण, माँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द, श्रीमद्‌ भागवत्‌ एवं धर्म विज्ञान का समन्वय पर हुआ। पोर्ट-ब्लेयर की विशेष आबादी नहीं है। फिर भी ३००-४०० लोग आते थे।

हम लोग पोर्ट-ब्लेयर की बात कर रहे थे। पोर्ट-ब्लेयर का इतिहास बहुत ही दर्दनाक है। हम लोग 'सेल्युलर जेल' देखने गये। कितना भयानक दृश्य। देखते ही कँपकँपी छुटती है। ६९८ १३½ × ७ की कोठरियाँ हैं। खिड़की तक नहीं। वहां किस प्रकार राजनैतिक बन्दियों को नाना प्रकार की यातनाएँ दी गयीं। सोचते ही रोंगटे खड़े होते हैं। इन्हीं में से तीसरी मंजिल पर वीर सावरकर को १९११ से १९२१ तक ११ वर्ष एक कोठरी में रखा गया। जो युवक विदेश से पढ़कर लौटा और देश की आजादी की आग में कूद पड़ा, ऐसे ही अनगिनत शहीदों की याद से सेल्युलर जेल गूंज रहा है। किस प्रकार वर्षों तक इतनी यातनाएँ देश को आजाद कराने के लिये देश भक्तों ने भोगी और अपना जीवन समर्पित किया। कई कैदियों को तो अपनी कोठरी में ही शौच जाना पड़ता था। उन्हें कोठरी के बाहर निकलने की इजाजत नहीं थी। सोने के लिये एक टाट की चट और ओढ़ने के लिये हैसियन का बोरा। पहनने को चट का झुगा। नीचे के तहखाने में एक साथ तीन फांसी के खम्भे और उनकी लाशें उसके पास ही समुद्र में बहा दी जाती थीं। सेल्युलर जेल का दृश्य अति मर्मान्तक एवं हृदयस्पर्शी रहा। जिन हजारों शहीदों ने देश की आजादी के लिये इतने कष्ट सहे, ७ फूट की कोठरी में वर्षों रहे, और उन्हीं की त्याग तपस्या, बलिदान से आज हमें आजादी मिली और हम लोग भौतिकता में इतने लिप्त हो गये हैं कि अपने पूर्वजों के त्याग का स्मरण ही नहीं करते। मैं नहीं जानता कि हमारे जो हजारों राजनेता ठण्ढी गाड़ियों एवं आलीशान महलों तथा सुरक्षा सैनिकों से घिरे रहते हैं, कितनों ने इस सेल्युलर जेल तीर्थ स्थान का दर्शन किया है। वहाँ ६९३ कोठरियाँ हैं। देश सेवा का व्रत लेने के पहले विशेषकर राजनेताओं के लिये यह चारों धाम की यात्रा के समान पवित्र है। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि राजनेताओं को यह स्मरण हो कि जिनके आत्मत्याग एवं बलिदान पर आज ये राज कर रहे हैं, वे इन तंग कोठरियों में वर्षों रहे, जाकर दो-चार दिन तो रहें। मेरा किसी पर व्यक्तिगत आक्षेप नहीं। फिर भी सोचने की बात है।

रामकृष्ण मिशन शताब्दी-समारोह : १ मई १८९७ — १ मई १९९८

रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन

बेलुड मठ, २ अगस्त। रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन द्वारा गठित रामकृष्ण मिशन शताब्दी-समारोह की केन्द्रीय समिति ने आगामी ३ और ४ फरवरी, १९९८ ई० को बेलुड़ मठ में द्विदिवसीय अखिल भारतीय युवा सम्मेलन आयोजित करने का निर्णय लिया है। प्रतिनिधि (डेलिगेट) के रूप में भाग लेने वाले प्रत्येक युवक और युवती को १००/- (एक सौ रुपये) प्रवेश शुल्क के रूप में और इसके अतिरिक्त २००/- (दो सौ रुपये) भोजन एवं आवास शुल्क के रूप में (यदि उसे आवासी प्रतिनिधि के रूप में रहना है) अदा करने होंगे। आवासी प्रतिनिधि को २ फरवरी को अपनी उपस्थिति दर्ज करानी होगी और ५ फरवरी १९९८ को निश्चयपूर्वक आवास स्थल छोड़ देना पड़ेगा। इसके लिए एक प्रपत्र भरना होगा जो निकट के मिशन केन्द्र से उपलब्ध हो सकेगा। इस प्रपत्र से अधिक जानकारियाँ मिल पाएँगी।

भक्तों के लिए शताब्दी समारोह का समापन-उत्सव बेलुड़ मठ में ७ और ८ फरवरी, १९९८ को दो दिनों के लिए मनाने का निश्चय किया गया है। जिन भक्तों ने सामान्य समिति (जेनरल कमिटी) के सदस्य के रूप में अपना नामांकन कराया है उन्हें अतिरिक्त ३००/- तीन सौ रुपये भेजने और आवास के लिए जमा करने होंगे। वे यहाँ ६ से ८ फरवरी, ९८ तक टिक सकेंगे। सदस्यों को शीघ्र ही भरने के लिए प्रपत्र भेजा जायगा। प्रपत्र भरकर शीघ्र लौटा दें। यदि कुछ जिज्ञासा हो तो इस पते पर शीघ्र लिखें—

Mission Centenary
RAMAKRISHNA MISSION INSTITUTE OF CULTURE
GOL PARK, CALCUTTA—700 029

अध्यक्ष : **स्वामी स्मरणानन्द** सचिव : **स्वामी लोकेश्वरानन्द**

रामकृष्ण अद्भुतानन्द आश्रम, छपरा

युवा-सम्मेलन

छपरा (बिहार) ११ अगस्त। रामकृष्ण मिशन की स्थापना के शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में स्थानीय रामकृष्ण अद्भुतानन्द आश्रम में आज युवा सम्मेलन का भव्य आयोजन किया गया। रामकृष्ण मिशन के राजकोट (गुजरात) आश्रम केन्द्र के तरुण-तेजस्वी संन्यासी, रामकृष्ण भावधारा की गुजराती मासिक पत्रिका "रामकृष्ण ज्योति" के सम्पादक स्वामी निखिलेश्वरानन्द सम्मेलन के मुख्य अतिथि थे। सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी महाराज ने कहा कि युवकों को राष्ट्र के नवनिर्माण में सक्रिय होकर पिल पड़ना चाहिए ताकि देश सुरक्षित रह सके एवं लोग अपनी सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण करते हुए एक संतुलित, पवित्र एवं सुसंस्कृत जीवन जी सकें।

स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी ने आगे कहा कि स्वाधीनता संग्राम के दौरान देश के क्रान्तिकारियों एवं स्वतन्त्रता सेनानियों के पास स्वामी विवेकानन्द की पुस्तकें रहा करती थीं जिनसे उन्हें राष्ट्र-प्रेम और देश के लिए प्राणोत्सर्ग करने की प्रेरणा मिला करती थी। इसी से तत्कालीन ब्रिटिश गुप्तचरों ने रामकृष्ण मिशन को प्रतिबंधित करने की अनुशंसा अंग्रेज सरकार से कर दी थी।

यह स्पष्ट है कि स्वतंत्रता संग्राम-काल में लोगों को जगाने एवं सक्रिय करने का कार्य स्वामी विवेकानन्द ने किया था। उन्होंने कहा—उठो, जागो और लक्ष्य प्राप्त किये बिना रुको मत। हम

उठे और जगे। फलतः हम स्वाधीन हो गये। स्वामी जी ने जगकर सो जाने को नहीं कहा। किन्तु हम जग कर सो गये। फलतः हमारा देश आज नाना प्रकार की कुरीतियों में फँस गया है। अब पुनः विवेकानन्द के विचारों को अपनी जीवन शैली में उतार कर ही हम अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी ने युवकों से आग्रह किया कि वे अपने जीवन में आत्मबल, आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, आत्मज्ञान और आत्म संयम के पंचशील को उतारने का प्रयास करें।

स्वर्ण जयन्ती की चर्चा करते हुए स्वामी जी ने कहा कि आज से सौ वर्ष पूर्व अमेरिका की धर्म महासभा से लौटने के बाद स्वामी विवेकानन्द ने भविष्यवाणी की थी कि अगले पचास वर्षों में भारत स्वाधीन हो जायगा। और यह आश्चर्य जनक तत्त्व है कि पूरे पचास वर्ष के उपरान्त सन् १९४७ में भारत स्वाधीन हो गया जिसकी आज हम स्वर्ण जयन्ती मना रहे हैं।

आरम्भ में स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी ने स्वामी अद्भुतानन्द जी के जीवन की संक्षिप्त रूप-रेखा प्रस्तुत करते हुए कहा कि वे श्रीरामकृष्ण की अद्भुत सृष्टि थे, इसी से स्वामी जी ने उनको अद्भुतानन्द की संज्ञा प्रदान की।

सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए सारण के तरुण जिला पदाधिकारी श्री प्रत्यय अमृत ने कहा कि स्वामी जी का यह उद्घोष—उठो, जागो और लक्ष्य प्राप्ति तक विश्राम मत लो—बड़ा ही प्रेरक और अर्थवान् है। इसे प्रत्येक युवक को अग्नि मंत्र की भाँति ग्रहण कर अपने जीवन एवं देश की समस्याओं का समाधान करने को अग्रसर होना चाहिए।

जे० पी० विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ० एस० एन० सिन्हा ने सम्मेलन की अध्यक्षता की।

आरम्भ में आश्रम के सचिव डॉ० केदारनाथ लाभ ने अतिथियों का स्वागत किया और प्रो० राधाकृष्ण प्रसाद ने धन्यवाद ज्ञापन किया। कुमारी ऋचा रश्मि और कुमारी स्मृति सुमन ने भी अपने विचार प्रस्तुत किये।

छपरा मंडल कारागार में विवेकानन्द वार्ड

छपरा, १२ अगस्त। स्थानीय छपरा मंडल कारागार में आज विवेकानन्द वार्ड का उद्घाटन रामकृष्ण आश्रम, राजकोट के स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी महाराज ने फीता काट कर किया। विवेकानन्द वार्ड (कक्ष) की स्थापना इस कारागार के कर्मठ एवं कल्पनाशील अधीक्षक श्री दीपक कुमार विद्यार्थी के सत्प्रयास के परिणाम स्वरूप हुई। कारापाल श्री देवेन्द्र प्रसाद ने भी इसमें महत्व-पूर्ण भूमिका निभायी।

अपने उद्घाटन भाषण में स्वामी निखिलेश्वरानन्द ने कहा कि प्रत्येक जीव में ब्रह्म समान रूप से विद्यमान है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि 'मैं उस ईश्वर की उपासना करता हूँ जिसे अज्ञानी लोग मनुष्य कहा करते हैं। मैं दरिद्र ईश्वर, शराबी ईश्वर, दुष्ट और अपराधी ईश्वर की आराधना करता हूँ।' वस्तुतः आज मैंने आप सब में ईश्वर के दर्शन किये हैं और आप सब स्वामी विवेकानन्द के भावों-विचारों को पढ़ें तथा अपने जीवन को वास्तविक रूप में ईश्वरता प्रदान करें। स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी ने वंदियों के बीच स्वामी विवेकानन्द की ८०० पुस्तकों का, रामकृष्ण अद्भुतानन्द आश्रम की ओर से, वितरण किया तथा मिष्टान्न भोजन के लिए एक हजार रुपये प्रदान किये। उन्होंने कारागार के १८ वार्डों में से प्रत्येक वार्ड के लिए १ वर्ष तक निःशुल्क विवेक शिखा उपहार स्वरूप प्रदान किया।

मंडल काराधीक्षक श्री दीपक कुमार विद्यार्थी ने आरम्भ में अतिथियों का स्वागत किया। वंदियों की सभा को रामकृष्ण अद्भुतानन्द आश्रम के सचिव डॉ० केदारनाथ लाभ ने भी सम्बोधित किया।

□

एक निवेदन

भगवान श्री रामकृष्णदेव, माँ सारदा तथा स्वामी विवेकानन्द के चरण रेणु से तीर्थीकृत तथा स्वामी विवेकानन्द स्मृतिविजड़ित आकर्षण केन्द्र ज्योति लिंग बाबा वैद्यनाथ की इस पुनीत नगरी देवघर में रामकृष्ण संघ द्वारा परिचालित प्रथम शिक्षण संस्थान रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ की स्थापना सन् 1922 में हुई। भगवान श्री रामकृष्ण देव के अन्यतम पार्षद श्रीमत् स्वामी तुरीयानन्दजी महाराज से अनुप्राणित तथा स्वामी विवेकानन्द के शिक्षादर्शों पर आधारित 75 वर्ष पूर्व प्रारम्भ की गई यह शिक्षण संस्थान आज पूरे भारतवर्ष में विख्यात है। रामकृष्ण संघ के द्वितीय अध्यक्ष परमपूजनीय श्रीमत्स्वामी शिवानन्दजी महाराज ने भविष्यवाणी की थी—'इस विद्यापीठ के माध्यम से भविष्य में बहुत महान कार्य सम्पन्न होगा, इसका भविष्य बड़ा ही उज्ज्वल है।'

विद्यापीठ के बहुमुखी कर्म-प्रवाह में आर्थिक अवस्था से विपन्न 400 छात्रों के लिए आज 'विवेकानन्द बालकेन्द्र' मुख्य इकाई के रूप में कार्यरत है जिसमें निःशुल्क शैक्षिक तथा क्रीड़ा संबंधी एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण की व्यवस्था है। इस अनुन्नत वर्ग को ही नवीन भारत का आधार बनाते हुए स्वामीजी ने कहा था—

"एक नवीन भारत निकल पड़े। निकले हल पकड़कर, किसानों की कुटी भेदकर, मछुए, माली, मोची, मेहतरों की झोपड़ियों से। निकल पड़े बनियों की दुकान से, भुजवा के भाड़ से, कारखाने से, हाट से, बाजार से। निकले झाड़ियों से, पहाड़ों—पर्वतों को भेदते हुए।' इस वाणी को मद्देनजर रखते हुए 'सबसे पीछे पड़े हुए, सबसे नीचे दबे हुए' वर्ग को अपने विनम्र भाव से शिक्षित करने के प्रयास में 'विवेकानन्द बाल केन्द्र' अनवरत संलग्न है।

संप्रति इन छात्रों की यथोक्त शिक्षा के लिए एक स्थायी भवन की नितान्त आवश्यकता है जिसकी अनुमानित लागत 10 लाख रुपये है। अतः रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ, देवघर की ओर से मैं इस महान एवं पवित्र कार्य को सम्पन्न करने के लिए आप उदारचेताओं से सहयोग की महती प्रार्थना करता हूँ। इति।

निवेदक
स्वामी सुवीरानन्द
सचिव
रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ, देवघर

नोट :—1. रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ, देवघर के नाम से ही चेक या ड्राफ्ट भेजे जाएँ।
2. रामकृष्ण मिशन को दिया गया दान धारा 80 [G] के अनुसार आयकर मुक्त है।

डाक पंजीयित संख्या - सी.एच.पी.-१४-८१
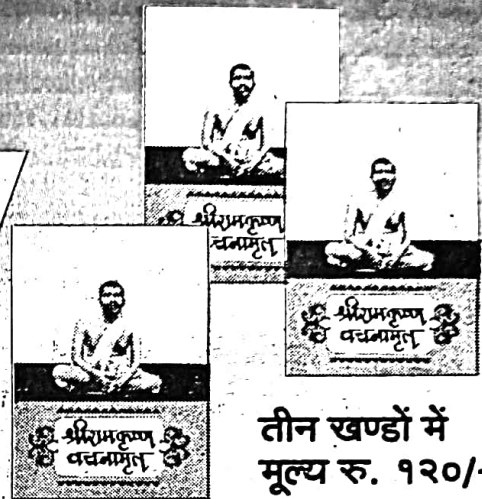
श्रीमती गंगा देवी, जयप्रकाश नगर, छपरा (बिहार) द्वारा प्रकाशित एवं शिवशक्ति प्रिन्टर्स, सैदपुर, पटना-४ में मुद्रित।